

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180951

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 82 / T 83 P Accession No. G.H. 924

Author जिजाठी रामनरेड्

Title पत्ता परमेश्वर 11952

This book should be returned on or before the date last marked below.

पैसा परमेश्वर

[नाटक]

लेखक

रामनरेश त्रिपाठी

प्रकाशक

हिन्दी-मन्दिर-प्रकाशन

नई दिल्ली

पहला संस्करण]

नवम्बर, १९५२

[मूल्य, तीन रुपये

प्रकाशक

रामप्रताप मिश्र

प्रबन्धक, हिन्दी-मन्दिर-प्रकाशन

२६, जैन-मन्दिर, नई दिल्ली

पहला संस्करण : नवंबर १९५२ : १००० प्रतियां : मूल्य ३)

मिलने के पते

१. हिन्दी-मन्दिर-प्रकाशन, २६ जैन मन्दिर, नई दिल्ली
 २. आत्माराम एंड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली
 ३. राजपाल एंड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली
-

सूचना

लेखक की आज्ञा प्राप्त किये बिना कोई इस नाटक को पूरा या आंशिक रूप में अभिनय करेगा या छापकर प्रकाशित करेगा तो वह कानून के सामने उत्तरदायी होगा ।

मुद्रक

चमनलाल कतियाल

अमर भारत प्रेस,
दरिबागंज, देहली ।

दृश्य और विषय



पहला अङ्क

दृश्य	विषय	पृष्ठ
१.	अजनबी का परिचय	१
२.	सेठ (१)	५
३.	सेठ (२)	१६
४.	डाक्टर	२७
५.	षकील	३६
६.	महन्त	४४
७.	कथा-वाचक	४८
८.	गाँव का हाट	५१
९.	सिनेमा-घर	५४
१०.	संगीतज्ञ रसोइया	५६

दूसरा अङ्क

१.	मजदूर नेता	६३
२.	गाँव का स्कूल	६६
३.	प्रेजुएट	७२
४.	सम्पादक	८१
५.	लेखक	८५
६.	प्रकाशक	९१

दृश्य	विषय	पृष्ठ
७.	परिणतजी	६४
८.	चित्रकार	६६
९.	किसान का घर	१०४
१०.	कवि-सम्मेलन	११४
११.	चप्पलों की दूकान	१२०

तीसरा अङ्क

१.	चाय के बरतन	१२३
२.	झाकू	१२४
३.	जज	१२८
४.	पुलीस	१३०
५.	ग्रामोत्सव	१३५
६.	सुन्दरी-मिलन (१)	१४५
७.	सुन्दरी-मिलन (२)	१५०
८.	चमारों का नाच	१५५
९.	पैसा-स्तोत्र	१६६
१०.	मन्त्रो	१७०
११.	उत्तर	१७६

भूमिका

वर्तमान सभ्यता मनुष्य की सभ्यता नहीं, पैसे की सभ्यता है। इस सभ्यता में सर्वत्र ईर्ष्या, राग-द्वेष, पर-निन्दा, छल-कपट, मिथ्या-भिमान और असत्य ही के दृश्य देखने को मिलते हैं। यह सभ्यता तो वास्तव में पैसे की छीना-भपटी का एक सुसंस्कृत रूप है और शिष्टाचार, विनय, नम्रता, मधुर वाक्य-विलास ये सब पैसे की रूढ़ता को कम करने के लेप हैं।

इस सभ्यता में दया और सहानुभूति के भाव बदला पाने की नीयत से प्रगट किये जाते हैं, आत्मा की स्वाभाविक प्रेरणा से नहीं।

परमेश्वर, जो मनुष्य का श्रेष्ठतम आविष्कार है और जिससे उसे आंतरिक शांति, सत्कर्मों की ओर प्रवृत्ति, दुष्कर्मों से घृणा और मनुष्य-मात्र में बन्धुत्व स्थापित करने की प्रेरणा मिलती थी, देखते-देखते संख्या के प्रकाश की तरह अदृश्य हो गया है। पैसे ने उसकी जगह पर पूरा अधिकार जमा लिया और वही परमेश्वर हो गया है।

परमेश्वर के साथ ही उसके दरबारी सत्य, न्याय, दया, धर्म, सदा-चार, क्षमा, योग-क्षेम, प्रेम, शांति, मृदुता, सेवाभाव, विनय, सुशीलता, अहिंसा और शौर्य आदि भी, जो मनुष्य-समाज में निवास करते थे, चले गये। अब मनुष्य अन्दर से खोखला हो गया है। उसके अन्दर कोई ऐसी प्रबल शक्ति नहीं रह गई है, जो उसे पाप-कर्म से रोके।

पैसे के राज्य में उसके दरबारी झूठ, दंभ, छल-कपट, लोभ, क्रोध, हिंसा, अभिमान, कलह, भय, आलस्य, परनिन्दा, मोह, भ्रम, विश्वास-

घात, कटुवचन, द्वेष और कुटिलता आदि ऊँचे-ऊँचे ओहदों पर बैठ गये हैं; और स्वेच्छा से शासन कर रहे हैं ।

परमेश्वर के राज्य में भगवान् भ्रम नाम से अवतार लेकर समाज में विद्यमान रहते हैं; और उनके दरबारी भी अपनी पसंद के अनुसार मनुष्य चुनकर उनमें आनन्द पूर्वक निवास करते हैं । वहाँ पैसा घर के बाहर के मामूली नौकर की तरह रहता है; भीतर उसका प्रवेश नहीं होने पाता ।

पैसे के राज्य में सेठ, डाक्टर, वकील, शिक्षक, लेखक, सम्पादक, समालोचक, पुस्तक प्रकाशक, चोर, डाकू, बुद्धिजीवी, भ्रमजीवी, समराजीवी, कमराजीवी, मालिक, नौकर, साधु, सन्त, रमते-राम, वेश्या, भाँड और भंडुके सब पैसे ही के अवतार हैं ।

सेठ चाहते हैं कि सब गरीब ही बने रहें; धर्माचार्य चाहते हैं कि सब मूर्ख ही बने रहें; डाक्टर चाहते हैं कि संसार रोगी हो जाय; वकील चाहते हैं कि सब लडते ही भगड़ते रहें; सरकार चाहती है कि स्टाम्पों की बिक्री से जिले भर का खर्च निकलता रहे और मशीनें बनाने वाले चाहते हैं कि आदमी के हाथ-पैर, आँख-कान सब बेकार हो जाय । सभ्य-जगत का प्रत्येक मनुष्य पैसे को छीन लेना चाहता है; चाहे बड़ छल-कट से मिले, चाहे झूठ बोलकर और भ्रम पैदा करके और चाहे चोरी-छाँके से । ये सभ्यता के कोई अच्छे लक्षण नहीं ।

सरकार पैसे ढालती है, और कानून बनाकर वह पैसे का व्यापार करती है; एक कौड़ी का कागज सौ रुपये में बेचती है । बनिये उसके एजेंट हैं, जो उसके रंग-विरंगे कागजों को किसानों के अन्दर पहुँचाते हैं और उनके अन्न और वस्त्र को इस प्रकार खींच लेते हैं, जैसे कँटिबे से मछली खींच ली जाती है । सरकार को इतने ही से सन्तोष नहीं होता, वह बनिये से इन्कमटैक्स भी लेती है । अतएव उसकी सदैव बढ़ी

लालसा रहती है कि बनिया इतना कमाये कि वह इन्कमटैक्स की सीमा में आ जाय ।

सारे देश में जितने आदमी नहीं हैं, उनसे कई गुना अधिक सभ्य सरकारों के बच्चे अर्थात् पैसे होते हैं । एक-एक आदमी को पैसे के कई-कई भूत लगे रहते हैं । जिस किसी ने पहले-पहल पैसे की कल्पना की, उसे नहीं मालूम था कि उसका यह सप्ट ऐसा प्रतापी निकलेगा कि एक दिन वह परमेश्वर को भी निकालकर मनुष्यों पर एकच्छत्र राज्य करेगा । यद्यपि मृत्यु अभी तक उसके हाथ में नहीं आई है, पर जीवन तो समूचा ही आ गया है ।

पैसे के राज्य में मनुष्यों के दो वर्ग दिखाई पड़ते हैं । एक तो किसान-वर्ग, जो शरीर से कठोर श्रम करके पृथ्वी से भोजन और वस्त्र की चीजें निकाल रहा है । दूसरा व्यापारी वर्ग, जो सभ्य कहलाता है और सरकार का ढाला हुआ पैसा देकर उन वस्तुओं को बदल लेता है । उसने व्यापार नाम से जगह-जगह पर कुछ ऐसी तरकीबें भी लगा रखी हैं कि बदले में दिया हुआ वह पैसा समयान्तर से फिर उसी के पास वापस भी आ जाता है ।

पैसा नित्य नये शारीरिक सुख नाम के बच्चे पैदा करता रहता है, जिन्हें वह अपने मनुष्यों को सौंप देता है, और वे उनके लालन-पालन में निमग्न हो जाते हैं !

पैसा चाहनेवाले वर्ग ने अपना एक जबरदस्त संगठन बना रक्खा है । समाज के मेधावी और शक्तिशाली व्यक्तियों को समाज से निकालकर अपने काम का बना लेने के लिये उसने यूनिवर्सिटी नाम की संस्थाएँ खोल रखी हैं । वे उनको पैसे की आराधना की विधियाँ सिखा देती हैं । यूनिवर्सिटी से निकलकर वे पैसे की मशीन के पुर्जों को हटाकर उनकी जगहों पर बैठ जाते हैं और मशीन को और तेजी से

अलाने लगते हैं ।'

इस संगठन की नित्य बढ़ती हुई संख्या से एक तो पहले वर्ग का संख्या-बल क्षीण हो जाता है । जिससे उत्पादन घटता रहता है । दूसरे, यह नित्य बढ़ती हुई संख्या अन्न के बदले में पैसा देकर उसी उत्पादन पर लद भी जाती है; और वह पैसा भी उत्पादन करनेवालों में झूठ, बेकारी, शौक और मुकदमेबाजी आदि रोग डालकर फिर अपने दल में भाग जाता है ।

कोई भी यूनिवर्सिटी ऐसी नहीं है, जो किसानों में योग्य और शक्ति-शाली व्यक्तियों की संख्या बढ़ाने के लिये हो, क्योंकि यूनिवर्सिटी का जन्म पैसे ही से होता है, और वह उसी के लिये होता है । यूनिवर्सिटियाँ ऐसा दल तैयार करती रहती हैं जो जरूरत के घेरे से भागकर शौक के घेरे में रहने का शौकीन बन जाता है जरूरत की सीमा होती है; पर शौक की सीमा नहीं होती । वहाँ आदमी पैसे के लिये रातदिन बेतहाशा दौड़ता रहता है ।

सरकार का भी एक अलग संगठन है, जिसमें सब पैसा चाहनेवाले ही भरे हैं, और उनका दल नित्य बढ़ता भी रहता है, जिससे अन्न-वस्त्र के उत्पादन पर लगातार भार भी बढ़ता रहता है ।

सभ्य-समाज की यूनिवर्सिटियों की शिक्षा का यह परिणाम दिखाई पड़ रहा है कि वह मनुष्य के कल्याण के लिए नहीं, बल्कि मिलों और फैक्ट्रियों का माल खाने के लिए ही दी जाती है । इस तरह शिक्षा द्वारा थोड़े से बुद्धि-सम्पन्न लोगों के लाभ के लिए बहुसंख्यक जनता को सदा ग़ेतों में खड़े रहने और पैसे का स्रोत खुला रखने को विवश किया जा रहा है ।

पैसे की सभ्यता में रोगों की आरम्भार वृद्धि होती रहती है, और हर एक रोग की सैकड़ों तरह की औषधियाँ तैयार करनेवाली

कैन्ट्रियों और दवाखानों को इस रास्ते से भी पैसा खींचने में मुगमता दी जाती है ।

मशीनें खेतिहर देश के लिये बहुत कम उपयोगी साबित हो रही हैं, बल्कि हानिकारक ही हैं । रेलों से बनिये को लाभ मिलता है, किसानों की तो हानि ही होती है । रेलें, तार, बिजली, टेलीफोन, हवाई जहाज, पानी के जहाज, सूत और कपड़ा तैयार करने की कलें आदि पैसे ही का उत्पादन बढ़ाती हैं और बनिया-वर्ग ही को लाभ पहुँचाती है ।

पैसे ने किसानों को घेर-घारकर और मनुष्यता की गोद से छुँन कर नेचल अन्न, खई और तेलहन पैदा करने की मशीनें बना दिया है ।

जन तन्त्र एक इन्द्रजाल-सा है और यह भी पैसे का एक खेल है । यह पैसे ही से चलता भी है । इसका मुख्य ध्येय भी जनता की क्रय-शक्ति को बढ़ाना और रहन-सहन को ऊँचे स्तर पर ले जाना है । इसका स्पष्ट अर्थ है, बनियों के लिये किसानों का बलिदान किया जाना ।

यूनान के राजदूत मेगास्थनीज ने लिखा है कि सम्राट चन्द्रगुप्त के राज्य में बनिये बाजार में दूकान खोलकर नहीं बैठते थे, बल्कि गाँव गाँव घेरी करके वे अपना माल बेचते थे और किसानों को गृहस्थी के जरूरी सामानों के लिये खेतों से बाहर नहीं जाना पड़ता था । “भँवरी” नाम से अब भी उस प्रथा के कहीं-कहीं दर्शन हो जाते हैं ।

पैसे ने उसे बिल्कुल ही पलट दिया । अब किसान बनिये के पास पहुँचते हैं और अनावश्यक चीजें भी खरीद लाते हैं । बनिया एक हाथ से देना है, सौ हाथों से लेता है, वह गरीब तो हो ही नहीं सकता । यह पैसे की कसमात है ।

पैसे की अधिकता से चीजें महँगी हो जाती हैं और बनिये के सिवा बाकी सब को कष्ट होने लगता है । सरकारें जब चाहें तब ज्यादा पैसा ढालकर चीजों को महँगा कर सकती हैं । पहले पैसा कम था, तब चीजें

(च)

का भाव इतना सस्ता था कि आज उस पर विश्वास नहीं हो सकता ।

तारीख फीरोजशाही में उसके लेखक बरनी ने अलाउद्दीन गिलजी (१२१६—१३२६) के जमाने का भाव दिया है । वर्तमान बील के अनुसार वह नीचे दिया जाता है:—

गेहूँ	एक	पैसे में	दो	सेर	खाँड	एक	पैसे में	साढ़े	चार	छटाँक
जौ	,,		साढ़े	तीन	सेर	गुड़	,,	अठारह	छटाँक	
धान	,,		तीन	सेर		नमक	,,	नौ	सेर*	
चने की दाल			तीन	सेर						

चीजों का भाव बादशाह के हुक्म से बाँधा जाता था । कोई कम या ज्यादा न बँच सकता था, न खरीद । शहन-ए-मंडी नाम का एक अफसर भावों की देखरेख के लिए अलग नियुक्त था । कोई कायदे के खिलाफ चलता था तो वह उसे कोड़े लगाता था । दूकान पर बैठकर जो कम तौलता था, उसके चूतड़ों का मांस काटकर उससे वजन की कमी पूरी कराई जाती थी । जिस बनिये पर कुछ गड़बड़ करने का शक होता था, वह लात मारकर बाजार से बाहर निकाल दिया जाता था । इससे बनिये कुछ ज्यादा ही तौलते थे । बरनी ने लिखा है कि जनता में लिक्कों का बहुत कम प्रचार होने के कारण ही चीजें सस्ती थीं ।

फीरोजशाह (१३५१—१३८२) के समय में भाव इस प्रकार था:—

गेहूँ	एक	पैसे में	पोने	दो	सेर	घी	एक	पैसे में	पोने	तीन	छटाँक
जौ	,,		साढ़े	तीन	सेर	चीनी	,,	दाई	छटाँक		
दाल	,,		साढ़े	तीन	सेर						

श्री श्रीगोपाल नेवटिया ने अपने एक लेख में पैसे से उत्पन्न महँगाई पर अच्छा प्रकाश डाला है । उसका सारांश नीचे दिया जाता है :—

* स्व० रामदास गोड़ के एक लेख से । लेखक

(छ)

“ २४०० वर्ष पूर्व कौटिल्य (चाणक्य) के समय में वर्तमान मुद्रा में परिवर्तित भाव ये थे :—

चावल	१ आना मन	दाल	१ आना मन
तेल	८ ,, ,,	नमक	११ ,, ,,
घी	१२ ,, ,,	चीनी	१० ,, ,,

ईस्वी सन् ६२५ के एक शिला-लेख में काम करने वालों की मासिक तनखाह इस प्रकार लिखी मिलती है :—

हरकारा	१० आना	दरवान	६ आना
निजी नौकर	६ ,,	मेहतर	६ ,,
भिश्ती	६ ,,	गड़रिया	६ ,,

आईन-ए-अकवरी में ईस्वी सन् १६०० के आसपास का बाजार भाव इस प्रकार दिया हुआ है :—

गेहूँ	५ आना मन	घी	२ रु० १० आ० मन
जौ	३ ,, ,,	दही	७ आना मन
चावल	८ आना से २॥) मन	किशमिश	३॥ आना सेर
तेल	२ रुपया मन	ईख	२ पैसा सेर
चीनी	१ रुपया छः आना मन	केला	२ पैसा सेर
नमक	६ आना मन	शाक-सब्जी	३ पैसा सेर
दूध	१० आना मन	ईंढ	१२ आना हजार

ईस्ट इण्डिया कंपनी के समय में भाव इस प्रकार थे :—

चावल	१ रु० से १।) रु० मन	तेल	दो आना सेर
दाल	डेढ़ रुपये मन	घी	सात आना सेर

मोटी धोती छः आने की एक ।

१६३६ में भाव इस प्रकार थे :—

चावल	८॥ रु० मन	तेल	२० रु० मन
------	-----------	-----	-----------

(ज)

दाण	५०० मन	घा	५००० मन
नीज	१२॥०० मन	मोटी धोती	२०० जोड़ी

आवक के भाव इस प्रकार है :

बाबल-दाल	२५००० मन	तेल	५०००० मन
नीनी	३०००० मन	मोटी धोती	८००० जोड़ी

+ + +

इस मंहगी का कारण है, रुपये-पैसे की बढ़तायत । जो रुपये पैसे बनाता है, कमाता नहीं आर ज्यादा तादाद में बनाता है, वह है सरकार । सरकार ही मंहगी की जिम्मेदार है । उसको चीजे चाहिये, नौकरियाँ चाहिये, बदले में वह रुपये-पैसे देती है । ये रुपये पैसे लोगों की जेबों में ज्यादा तादद में पहुँचे तो चीजें मंहगी होंगी; अर्थात् रुपये जैसे सस्ते हो जाते हैं ।

+ + +

आदमी की जरूरत पहले से ज्यादा बढ़ गई है । इस युग में रहन-सहन के तौर-तरीकों तथा विज्ञान की “कृप.” से आदमी दौड़ता ही रहेगा और जरूरतें उसके आगे आगे दौड़ती चलेगी ।” *

अब इन भावों को आजकल के भावों में मिलाकर देखिये तो स्पष्ट हो जाता है कि मंहगी सरकार की मुद्रा-नीति का कुपरिणाम है ।

“व्लैक” करना आदमी ने पैसे ही की अधिकता के कारण सीख लिया । एक रुपये के नोट इतनी अधिक संख्या में भ्रम दिये गये कि लोग उन्हें लेकर बाजारों में दौड़ पड़े और वनियों को देकर बदले में अगड़न-बगड़म चीजें उठा लाये । सरकार का भिक्का तो जम ही गया । अब उसका कहना है कि क्रय-शक्ति बढ़ रही है और रहन-सहन का

* हिन्दी-टाइम्स “नवनीत” के नवम्बर १८२२ में प्रकाशित लेख से ।

स्तर ऊँचा हो रहा है। यह धारणा वैसी ही है, जैसे किसी फिल्मी स्त्री को देखकर कोई यह मान बैठे कि वह वृद्धा और कुरुना थी, अब युवती और सुन्दरी हो रही है।

इस देश की प्राचीन सभ्यता के दूरदर्शी विद्वानों जैसे की इस घातक शक्ति से मलीभाति परिनिप्त जान पड़ते हैं; क्योंकि उन्होंने स्वयं जैसे से दूर रहकर और सादा जीवन बिताकर समाज के सामने एक आदर्श उपस्थित किया था। उन्होंने जैसे को तुच्छ समझनेवाले त्यागियों की वीर-गाथायें गाने-योग्य ललित छन्दों में रचकर अगली पीढ़ी के लिये रख भी दिया था। खेद की बात है कि ज्ञान की वह भागा जैसे की सभ्यता के रेगिस्तान में खूब गई है।

सभ्य-समाज में भाषा और शिष्टाचार नाम के अंग-संचालनों के परदों की आड़ में जो पाप किया जाता है “वह पाप नहीं समझा जायगा” “शैतान” या जैसे का यही उपदेश सर्वमान्य हो रहा है और जैसे ही का राज्य विस्तृत और स्थायी होता जा रहा है। ऋषि-मुनियों, धर्मशास्त्रों, वाल्मीकि, व्यास, कालिदास और तुलसीदास आदि कवियों, शंकर, दयानन्द और गाँधीजी आदि महान् आत्माओं ने जिस सभ्यता का निर्माण और समर्थन किया था, वह धीरे-धीरे लुप्त हो रही है।

ललित कलायें, जिनको विकसित करने का गर्व जैसे को है, वे जैसे के घेरे में पड़कर संकुचित भी हो गई हैं; पैसा इस पर भी गर्व कर सकता है।

साम्यवाद, समाजवाद, निरीश्वरवाद, समानाधिकार, पूँजीवाद, मिल-मालिक और मजदूर-विवाद, सरकार और पार्टियाँ सब जैसे ही के कच्चे-बच्चे हैं, जो उस समाज को, जो जैसे से दूर रह कर स्वाभाविक तौर पर संसार के कल्याण के लिए मनुष्य ही बना रहना चाहता है, विविध चिन्ताओं में ग्रस्त और निर्बल बना रहे हैं।

(ब)

वर्तमान सभ्यता में एक सबसे बड़ा दुर्गुण है और जिससे सभी मनुष्य ऊब जाते होंगे। वह यह है कि शरीर के एक अंग—केवल पेट पर सभ्य मनुष्य को दिनरात के चौबीस घंटों में अठारह घंटे लगाने पड़ते हैं; फिर भी पैसे की प्यास नहीं बुझती। मेरी राय में अच्छी सभ्यता वह कही जायगी, जिसमें मनुष्य को पेट के लिए छः घंटों से अधिक समय न लगाना पड़े तब बाकी समय को वह अपने आत्म-विकास और दूसरों की सेवा में लगा सकता है।

इस देश की प्राचीन सभ्यता का एक वाक्य सुनहले अक्षरों में लिखकर हर एक घर के सामने टाँग देना चाहिये और विद्यालयों में पहला वाक्य उसी से शुरू किया जाना चाहिये। वह है—दूसरों के लिए जिओ। वर्तमान सभ्यता के सारे चमत्कार इसके सामने बुच्छ हैं। वह मनुष्यता की कुंजी है और यही मनुष्य-जाति में शांति रखने की अमोघ औषधि भी है।

वर्तमान सभ्यता में हर एक मनुष्य केवल अपने लिये जीता है, और इसीसे वह निस्सहाय, चिंता-ग्रस्त और पैसे के लिये व्याकुल होकर बिना पतवार की नाव बन जाता है।

इस देश की प्राचीन सभ्यता में कभी ऐसे पिता भी रहे होंगे, जिनका गुण-गान किसी प्राचीन कवि ने इस प्रकार किया है:—

नित्यं भोजन-वस्त्र-दान-निरतं सदभावपूर्णोदरम् ।

दातारं सकलेप्सितस्य सततं संसार-दीक्षाप्रदम् ।

सत्यं प्रेमभरं दया च हृदयं प्रत्यक्षं देवं गुरुम् ।

वन्देऽहं जनकं शरण्यं चरणं पूज्यं परं प्राणिनाम् ।

[नित्य भोजन और वस्त्र देने में तत्पर, सच्चे प्रेम से भरे उदर वाले, सब प्रकार की इच्छाओं को सदा पूर्ण करनेवाले, संसार की रीति-नीति सिखाने वाले, सच्चे प्रेम से पूर्ण, दया से भोगे हृदय वाले, प्रत्यक्ष

देव, ज्ञान देनेवाले, शरण में आये हुए की रक्षा करनेवाले और जीव-मात्र के परम पूज्य पिताजी को मैं प्रणाम करता हूँ ।]

क्या वर्तमान सभ्यता में ऐसे पिता जन्म ले सकते हैं? आज तो समाज में पिता और परमेश्वर दोनों पैसे के पुत्र हो रहे हैं ।

इस प्रकार पैसे का भारतीय संस्कृति पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, इसी का दिग्दर्शन कराने के लिए मैंने इस नाटक की रचना की है ।

मेरी जानकारी के अनुसार इस नाटक का विषय नाटक-रूप में बिलकुल नया है । इस देश की किसी भाषा में भी इस विषय का कोई नाटक या प्रहसन मेरे देखने या सुनने में नहीं आया है । अतएव इस मार्ग का पथिक मैं अकेला ही था । मुझे अपनी ही स्वतन्त्र धुद्धि से चलना पड़ा है; इससे त्रुटिओं भी रह गई होंगी, जिनके लिये कृपालु पाठक क्षमा करेंगे ।

इस नाटक के दृश्यों में कई ऐसे व्यवसायों के चित्रण हैं, जिन्हें मेरे कई घनिष्ठ मित्र भी करते हैं । उनसे मेरा सविनय निवेदन है कि मैंने किसी व्यक्ति-विशेष को लक्ष्य में रखकर कुछ नहीं लिखा है । उनका कोई मजाक उड़ाये या उनके व्यवसाय के कारण उनसे घृणा करे तो इसे भी बैसे ही का प्रमाद समझकर वे मुझे क्षमा करें ।

नाटक लिखते समय महात्मा गाँधीजी के दो उपदेश-वाक्य सदा मेरे ध्यान में रहे हैं :—

१—सत्य को भय से लपेटकर आगे मत करो, हार जायगा ।

२—पाप को उजाले में रख दो, सूख जायगा; अँधेरे में रखलो तो बनपेगा ।

मैंने यथामति इनका अनुसरण किया है । अतएव आशा है कि परिश्रम कल्याणकारी ही होगा ।

यह व्यंग्यात्मक शैली का नाटक है और व्यादातर संवादात्मक है । इसमें हँसने-हँसाने ही की बातें नहीं हैं, गम्भीरता से विचार करने की भी

(ठ)

काफ़ी सामग्री है। विचारशील विद्वानों से प्रार्थना है कि वे इसे पढ़कर, देखकर या सुनकर अपने विचार व्यक्त करें, जिससे समाज का हित हो।

बसन्त-निवास, सुल्तानपुर

दीपावली, १८-१०-५२

रामनरेश त्रिपाठी

पैसा परमेश्वर

पहला अङ्क

पहला दृश्य

स्थान—क्लब-घर के सामने का लंबा-चौड़ा लॉन ।

समय—शाम के चार बजे ।

[लॉन पर अर्द्धचन्द्राकार में बहुत-सी कुरसियाँ रक्खी हैं । सामने एक मेज है, जिस पर रंगीन फूलदार चादर पड़ी है । मेज के दोनों कोनों पर सुन्दर-सुन्दर फूलों और पत्तियों से सजे हुए दो गुलदस्ते रक्खे हैं । दूसरी तरफ बीच में एक कुरसी पर क्लब के सभापति और उनकी बगल वाली कुरसी पर अजनबी बैठे हैं । सभापति का रंग गोरा और चेहरा रोवदार है । सभापति कोट पतलून पहने हैं । सिर खुला हुआ है । अजनबी का रंग घोर काला, शरीर तगड़ा, आँखें बड़ी, चेहरा भरा हुआ और उम्र २४/२५ वर्ष के लगभग है । वह घुटनों तक एक धोती पहने हैं और कंधे पर एक शँगौल्ला ओढ़े हुए है । उसके सिर के बाल बड़े-बड़े और घुँघराले हैं । उसकी कुरसी के पास फर्श पर एक डंडा पड़ा है, जिसे हाथ में लेकर वह आया है ।

सामने की कुरसियों पर क्लब के सदस्य बैठे हैं । कुछ कुरता धोती, कुछ चूड़ीदार पाजामा, अचकन और सिर पर दुपलिया टोपी, कुछ चौड़े

मुँह का पाजामा और अचकन, और कुछ धोती, कोट और पगड़ी पहने हैं। कुछ स्त्रियाँ भी हैं। पोशाक से देश के समस्त प्रान्तों के लोग पहचाने जा सकते हैं। सभापति के पीछे क्लब के क्लर्क और चपरासी खड़े हैं।]

सभापति—(उठकर) माननीय सदस्यो ! आपको याद होगा कि पिछली बार क्लब में यह प्रश्न उठा था कि हमारी वर्तमान सभ्यता के बारे में उन लोगों की क्या राय है, जिन्हें हम असभ्य गिनते हैं। खुशी की बात है, एक सज्जन ऐसे मिल गए हैं, जो इस प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर दे सकते हैं और वह मेरी बगल में बैठे हैं।

[तालियों की जोरदार आवाज़। सदस्य अजनबी को देखकर मुस्कुराते हैं।]

एक सदस्य—हमलोग इन महाशय का कुछ विशेष परिचय जानना चाहते हैं।

सभापति—ये हमारे देश के उत्तर तरफ जो लंबा पहाड़ है, उसकी दूसरी तरफ के किसी घने जंगल के निवासी हैं। इनके पिता जंगलियों के सरदार हैं। संसार देखने की प्रबल लालसा से ये चुपके से घर छोड़कर भाग आये हैं। मैं जंगल में घूमने गया था, तब ये मुझे भागते हुए मिले थे।

दूसरा सदस्य—भाग क्यों रहे थे ?

सभापति—(मुस्कुराकर) इसकी भी एक मनोरंजक घटना है। ट्रेन इन्होंने कभी देखी नहीं थी। संयोग से जब वह जंगल में होकर जा रही थी, तब इन्होंने समझा कि कोई बड़ा-सा अजगर फुफकारता हुआ जंगल में घुसा जा रहा है। (कहकहे

और तालियों की जोर की आवाज) इनकी जवानी इनके डर का कारण जानकर मैंने समझा कि अभी इन्होंने सभ्य संसार बिलकुल नहीं देखा है, और यही वह उपयुक्त व्यक्ति हैं, जो हमारे प्रश्न का ठीक जवाब दे सकते हैं। मैं इन्हें अपने साथ ले आया और एक ट्यूटर रखकर मैंने इन्हें अपनी भाषा सिखलवा दी। ये बड़े मेधावी हैं। इन्होंने बड़ी जल्दी भाषा सीख ली। मेरे घर आकर जब इन्होंने बन्दूक की गोली से जानवर और पिस्तौल की गोली से चिड़िया मरती देखी; बंबे से पानी, दियासलाई से आग, काठ के बक्स में से आदमी की आवाज, बिजली के बल्ब से रोशनी और फाउन्टेनपेन से स्याही निकलती देखी; बिना घोड़े की गाड़ी चलती देखी; रेडियो के गाने सुने, तब ये आँखें फाड़-फाड़ कर ऐसा मुँह बनाते थे कि याद करके हँसी आती है।

[हँसी और तालियों की आवाज]

तीसरा सदस्य—ये कब जवाब देंगे ?

सभापति—अब यही बताएँगे। (अजनबी से) हमारी सभ्यता आपको कैसी लगती है ? इस प्रश्न का उत्तर क्लब के सदस्य आपसे सुनना चाहते हैं।

[सभापति बैठ जाते हैं।]

अजनबी—[उठकर] सज्जनो ! अभी तो मैंने आपके देश की आश्चर्य में डालनेवाली कुछ चीजें ही देखी हैं। आपके समाज को देखे बिना आपके प्रश्न का मैं क्या उत्तर दूँ ?

एक सदस्य—भापा तो ये ठीक जान गये हैं। अच्छा, कृपा करके

यह बताइए, आप कितना समय लेंगे ?

अजनबी—कम से कम दो वर्ष। मैं आपके देश को अच्छी तरह देखकर, आदमियों से मिलकर तब मेरी राय में जैसा जायेगा, वैसा बताकर जाऊँगा।

[अजनबी बैठ जाता है।]

सभापति—[उठकर] इनके लिए मैंने यह सुविधा कर दी है कि क्लब के सब सदस्यों की सूची, जिम्में सबके नाम, पते और उनके धंधे लिखे हैं, इनको दे दी है और मैं सब सदस्यों के नाम इस विषय का पत्र भी भेज रहा हूँ कि ये जिम्मे जो कुछ पूछें, उसका उत्तर विलकुल सच-सच वह इनको बता दे, कोई बात छिपाकर न रखे। आशा है, माननीय सदस्य मेरी इस प्रार्थना का मान रखेंगे। [तालियों की आवाज]

एक सदस्य—इनका नाम क्या है ?

सभापति—इनका असली नाम तो कुछ टेढ़ा-सा है। मैंने अजनबी रख दिया है। [हँसी और तालियों की आवाज] अजनबीजी को मैंने यह भी बता दिया है कि देशभर के सब प्रमुख व्यक्ति जिनमें सेठ, डाक्टर, वकील, सरकार के बड़े अफसर, समाज के नेता, मंत, महंत, प्रोफेसर, पेशेवर, किसान आदि सभी श्रेणियों के लोग हैं, क्लब के सदस्य हैं; वे सूचना पाकर इनको मिलने का समय देंगे। अब मैं प्रस्ताव करता हूँ कि हमलोग चलकर अजनबीजी के सम्मान में इनके साथ चाय पिएँ, जिसकी व्यवस्था अलग की गई है।

मम सदस्य—हम सभी सहमत हैं ।

[तालियों की जोर की आवाज]

[समापति उठकर आगे चलते हैं, उनके पीछे अजनबी और शेष सभी सदस्य एक-एक करके जाते हैं ।]

दूसरा दृश्य

स्थान—सेठ की गद्दी ।

समय—सबरे आठ बजे ।

[सेठ नहा-धोकर सिर के बाल संवारे हुये, रेशमी कुरता और बारीक सफेद धोती पहने कमरे में गद्दे पर बैठा है । सामने एक छोटी-सी चौकी है, जिस पर कुछ कागज-पत्र रखे हैं । उन्हें वह एक-एक करके देख रहा है ।

कमरा चित्रों से सजा हुआ है । छत से बिजली के कई बल्ब लटक रहे हैं । कमरे के आधे हिस्से में गद्दा बिछा है, और आधे में कालीन है । जिस पर एक सुन्दर मेज के चारों ओर चार कुर्सियाँ रखी हैं । एक तरफ टेलीफोन रक्खा है; एक तरफ एक छोटी मेज पर रेडियो का बक्स है । अजनबी का प्रवेश ।]

सेठ—[अजनबी को देखकर] आइये अजनबीजी ! मैं तो आपका इन्तजार ही कर रहा था ।

[अजनबी दोनों हाथ जोड़कर अभिवादन करके और सेठ का हस्ताक्षर पाकर उभरता दाहिनी ओर बैठ जाता है । एक नीकर चाय और जलपान का सामान मेज पर रख रहा है ।]

सेठ—[अजनबी से] कहिये, आप कहाँ-कहाँ घूम आये ?

अजनबी—अभी तो मैं गाँवों ही में घूमता रहा हूँ । रास्ते में दो चार शहरों में भी गया हूँ ।

सेठ—[पत्र उलटते हुए] गाँव और शहर में आपको क्या अन्तर दिखाई पड़ा ?

अजनबी—गाँव मुझे बहुत पसन्द आया । वहाँ के निवासियों के स्वभाव में मैंने सच्चे प्रेम की झलक देखी ।

सेठ—[कागज उलटते हुये] आप भी तो गाँव ही के निवासी होंगे ?

अजनबी—हाँ, मेरा भी गाँव ही है । शहर की चहल-पहल तो मैंने पहले कभी देखी ही न थी ।

सेठ—[कुछ विरक्त भाव से] तभी । और शहरों के निवासी ?

[उत्तर सुनने के लिये सेठ हाथों को समेटकर मसनद पर पीठ की ओर झुक जाता है ।]

अजनबी—शहरों में अभी तक तो मुझे बनावट ही बनावट दिखाई पड़ी है ।

सेठ—मनुष्य की बुद्धि का विकास भी वहीं दिखाई पड़ेगा ।

आपने अभी शहर को गौर से नहीं देखा । [नोकर मेज के पास खड़ा होकर अंगोछे से मक्खियाँ उड़ा रहा है । उसकी ओर देखकर]
चलिये, पहले आपको चाय पिलायें, फिर बातें करेंगे ।

[सेठ उठकर चाय की मेज के पास कुर्सी पर जा बैठता है । पीछे-पीछे अजनबी भी उठकर सेठ के सामने वाली कुर्सी पर जा बैठता है । कमरे में बगल का एक दरवाजा खुलता है और बीस-वाइस साल का एक नवयुवक निकलकर दोनों के बीच वाली कुर्सी पर बैठ जाता है ।

नवयुवक का रँग गेहुँवा, चेहरा भव्य, सिर के बाल संवारे हुये, बारीक कपड़े का सफेद कुरता और पैरों में मखमली चप्पल पहने हुये नौकर प्लेटों में मिठाइयाँ और नमकीन रखकर अजनबी, सेठ और युवक के सामने रखता है और प्यालों में चाय तैयार करके देता है।]

युवक—[खाते-खाते सेठ से] यही अजनबीजी हैं ?

सेठ—[हँसकर] हाँ, यही हैं। ये ही इस बात का उत्तर देंगे कि हमारी सभ्यता इनकी दृष्टि में कैसी लगती है।

अजनबी—[सेठ से युवक की ओर संकेत करते हुए] आपका परिचय ?

सेठ—[मुस्कराकर] यह साला है।

[अजनबी खाना-पीना बंद करके आँखें फाड़कर और भौचक्का-सा मुँह बनाकर युवक का मुँह देखने लगता है। सेठ और युवक दोनों अजनबी का मुँह देखने लगते हैं।]

अजनबी—[अचरज भरी आवाज़ से] यही साला है ?

[सेठ जोर से हँसता है, युवक मुस्कराता है]

सेठ—हाँ, यही साला है। कहिये आपको कैसा लग रहा है ?

अजनबी—अभी तक मैं बराबर सुनता रहा हूँ कि हरएक गाँव में साले ने कुछ न कुछ गड़बड़ कर रखी है। पर साले को आज ही देखा। क्या सचमुच दुनिया में जितने बुरे काम हैं, वह साला ही करता है ?

[सेठ ठहाका मारकर हँसता है और युवक की ओर देखता है। युवक कुछ लज्जित-सा हो जाता है।]

सेठ—[खूब हँसकर] बुरे काम तो और लोग भी करते हैं; पर

साला ही क्यों बदनाम है, मालूम नहीं ।

अजनबी—हाँ, देखिये न, कोई नहीं कहता कि साले ने धर्मशाला बनवा दी, साले ने कुँवा बनवा दिया, साले ने पाठशाला खोल दी, साला बड़ा धर्मात्मा है, साला बड़ा न्यायकारी जज है, साला मन्त्री हो गया, साला सेठ हो गया ।

[अजनबी खुद हँसता है, सेठ भी खूब हँसता है. युवक भी मुस्कुराता है ।]

सेठ—मनुष्य-जाति का पहला साला बड़ा बदमाश रहा होगा, उसी की यादगार अबतक चली आती है ।

अजनबी—और वह किसी बंगाली का साला रहा हागा । क्योंकि बंगालियों का गुस्सा उसी तक खतम नहीं हुआ, उसकी अगली पीढ़ी को भी उन्होंने पकड़ लिया है । वे गुस्से में आते हैं, तो कहते हैं—‘सालार बेटा;’ अर्थात् साले का बेटा । साला तो बदमाश ही है, बेटा भी उससे कम नहीं है ।

सेठ—आपकी यह नई खोज है और मजेदार है । [कुछ गम्भीर होकर]
साला हमारी भाषा में स्त्री के भाई को कहते हैं ।

अजनबी—हाँ, कोप में मैंने पढ़ा तो ऐसा ही है: पर साले को कभी देखा नहीं था । [सेठ और युवक हँसते हैं; फिर नय मिटाइयाँ और फल खाने और चाय पीने लग जाते हैं । सामने के खुले हुए मुख्य दरवाजे से एक दुबले-पतले, गौर वर्ण, मुन्दर आकृति वाले व्यक्ति का प्रवेश । उम्र चालीस के लगभग । सिर पर बड़े-बड़े बाल; मुँह पर मोँछ और दाढ़ी; पोशाक मोटी धोती पहने और एक अँगोछा ओढ़े । सेठ उसे देखते ही उठता है और

उस व्यक्ति के पास जाकर उसके चरणों की धूल लेकर सिर से लगाता है और उसे गद्दे पर ले जाकर अपनी जगह पर बैठाता है फिर उसके सामने हाथ जोड़कर बैठ जाता है। युवक उठकर जधर से आया था, उधर ही चला जाता है।]

सेठ—[अजनबी से] आइये अजनबीजी ! आप भी हमारे महाराज का दर्शन कीजिये । आप बड़े महात्मा, माया-मोह से रहित, संसार से निर्लिप्त, शास्त्रों के बड़े भारी विद्वान परम-हंस और तपस्वी हैं । इस दास पर कृपा रखते हैं और कभी-कभी दर्शन देने आ जाते हैं ।

[अजनबी गद्दे पर जाता है । महात्मा को प्रणाम करके अपनी पहली जगह पर ही बैठ जाता है और दोनों को गौर से देखने लगता है ।]

महात्मा—[सेठ से] कल तीर्थ को जाने वाला हूँ । आज सबरे टहलने निकला तो भगवान ने तुम्हारा स्मरण दिला दिया, इससे इधर चला आया ।

सेठ—[हाथ जोड़े हुए] मेरा अहोभाग्य है, जो आपको इस दास का स्मरण आया । [सेठ जेब से दस-दस रुपये के दो नोट निकालता है और महात्मा के चरणों के पास रख देता है ।] यात्रा में आपको जरूरत पड़ेगी ।

[महात्मा नोटों का उठाकर अँगोछे के कोने में बाँधते हैं और उठकर जाते हैं । सेठ दरवाजे तक पहुँचाने जाता है । दरवाजे पर पहुँचकर वह फिर महात्मा के चरणों की धूल सिर पर लगाता है और महात्मा के चले जाने पर, लौटकर समनद के पास आकर अपनी जगह पर आराम से बैठ जाता है ।]

अजनबी—महात्माजी में आपकी बड़ी श्रद्धा है ?

सेठ—[मुँह बनाकर] बहूत ।

अजनबी—आपके जीवन पर महात्माजी के जीवन का क्या प्रभाव पड़ा है ?

सेठ—[स्पष्ट स्वर में] कुछ भी नहीं । उनके जीवन में ऐसी कोई बात ही नहीं है, जिसका प्रभाव मेरे जीवन पर पड़ता ।

अजनबी—फिर श्रद्धा क्यों है ?

सेठ—डर के मारे ।

अजनबी—डराने वाली कोई बात तो उनमें दिखाई नहीं पड़ी ।

सेठ—वह आपको दिखाई पड़ेगी भी नहीं । आपने इतना तो देखा ही है कि महात्मा मुझसे ज्यादा सुन्दर, मुझसे ज्यादा तन्दुरुस्त और मुझसे ज्यादा कम खर्चीले हैं । मैंने आपको बताया है कि वे सब शास्त्रों के पण्डित भी हैं । अब सोचिए, कहीं वे हमारा धंधा करने लग जायँगे तो हमारे जैसे लोग तो हवा हो जायँगे न ? इसीसे जब उनको देखता हूँ, तब डर जाता हूँ और महात्मा, परमहंस, तपस्वी, संसार से विरक्त आदि शब्दों से थक्का मारता हूँ कि वे अपनी ही सीमा में रहें और हमारा मुख देखकर कहीं इधर न आ जायँ ।

अजनबी—[हँसकर] पर महात्माजी आपकी चतुराई तो समझते ही होंगे ?

सेठ—समझते क्यों नहीं ? यह श्लोक तो उन्हें कंठस्थ ही रहता है:—

व्यापारे वसते लक्ष्मी तदर्थं कृषिकर्मणि ।

तदर्थं राज सेवायां भिक्षां नैव च नैव च ॥

इसका अर्थ भी वे हमें खूब समझाते हैं। [हँसकर] पर खुद नहीं समझते।

अजनबी—फिर ऐसे व्यक्ति को धन देकर आप पाल क्यों रखते हैं ?

सेठ—जिससे वे गरीबों में न सरक जायँ। असली भय तो हमें गरीबों ही से है। महात्माजी को मूर्ख बनाये रखना सहज है, पर गरीब को गरीब बनाये रखना बड़ा मुश्किल काम है।

अजनबी—क्यों ? उनसे आपको क्या डर है ?

सेठ—डर ? सारा डर तो उन्हीं से है। हम महलों में रहते हैं, वे सड़े-गले भोपड़ों में पशुओं की तरह उम्र काटते हैं। हम मोटर में चलते हैं, वे मोटर की धूल फाँकते चलते हैं। हमारा कुत्ता भी जो खाना रोज खाता है, वैसा वे त्यौहार के दिन भी नहीं पाते। हमारी धोती या रेशमी कुरता जरा कहीं फट जाता है, तो हम उसे फेंक देते हैं; वे बेचारे चिथड़ों में एक लंबी उम्र बिता देते हैं। हमारा सुख देखकर उनमें ईर्ष्या उत्पन्न होना स्वाभाविक है। हम उसी ईर्ष्या से डरते हैं।

अजनबी—उसका इलाज आप क्या करते हैं ?

सेठ—इलाज न करते रहें, तो एक दिन भी जीना पहाड़ हो जाय। ईर्ष्या जहाँ पैदा होती है, वहीं उसका इलाज रखवाते रहते हैं।

अजनबी—इलाज क्या है ?

सेठ—पूर्वजन्म और पुनर्जन्म का भय उनके दिमाग में भरते

रहना और उनको काम-वासना में फँसाये रखना । कामाग्नि तो उनके शरीर ही में पैदा होती है, उसमें हमें कुछ खर्च नहीं करना पड़ता; सिर्फ फूँक लगवानी पड़ती है ।

अजनबी—जरा खुलासा समझाइये ।

सेठ—हमने कुछ पूँजी-शोपक रख छोड़े हैं, जो गरीबों को गरीब बनाये रखने में हमारी मदद करते रहते हैं ।

अजनबी—वे कौन हैं ?

सेठ—कथावाचक, उपदेशक, महंत, रमतेराम, ज्योतिषी, पुरोहित, पुजारी, कवि, और पण्डित, ये तो जव से पैसा है, तभी से साथ-साथ चले आते हैं । अब हमने एक और नया शोपक खड़ा कर दिया है ।

अजनबी—वह कौन ?

सेठ—मिनेमा घर ।

अजनबी—ये पूँजी-शोपक क्या काम करते हैं ?

सेठ—कवि और पण्डित को छोड़कर बाकी शोपक कथाओं और उपदेशों द्वारा ऐसे विचारों का प्रचार करते हैं कि पूर्वजन्म में जो दान-पुण्य किये होगा, वही इस जन्म में सेठ बन सकता है और जो इस जन्म में दान-पुण्य करेगा, वह अगले जन्म में सेठ बनेगा । इन विचारों में फँसे रहकर गरीब लोग अपनी पूँजी दान करते रहते हैं और गरीब बने रहकर हमेशा राष्ट्र की सेवा करते रहते हैं । [हँसता है ।]

[पुरोहित का प्रवेश । उम्र २५ । ३० के भीतर । शरीर दुबला-पतला । माथे पर तिलक । कर्ण में पोथी । पोशाक—धोती, भिर्जूई

दुपट्टा और पगड़ी । पुरोहित आकर सेठ के सामने खड़ा हो जाता है ।]

सेठ—[देखकर और प्रणाम करके] अन्दर जाइए । आज तो शायद मैं न आ सकूँ, काम बहुत है । आप कथा सुनाकर चले जाइएगा ।

पुरोहित—[आशीर्वाद देकर] बहुत अच्छा ।

[पुरोहित जाता है । ज्योतिषी का प्रवेश । उम्र ३०।३५ के भीतर । माथे पर लाल रंग का तिलक । आस्ये चढ़ी हुई । पोशाक—पुरोहित जैसी । गले में बड़े दानों के रुद्राक्ष का कंटा]

सेठ—[देखकर और प्रणाम करके] पूजा की सामग्री मैंने अन्दर भेजवा दी है । आप अन्दर जाइए और देखिए, खूब मन लगाकर विधिपूर्वक पूजन करके शनैश्चर को शांत कीजिए । मुझे बहुत डर लग रहा है ।

ज्योतिषी—[आशीर्वाद देकर] आप चिन्ता न कीजिए सेठजी, मैं सब को शांत कर दूँगा ।

[ज्योतिषी जाता है ।]

अजनबी—ये लोग कौन हैं ?

सेठ—एक तो मेरे कुल-पुरोहित हैं । पढ़े-लिखे हैं । ये कहीं सेठ बनने का हौसला न कर बैठें, इससे इनको कुछ दे-दिलाकर देवताओं को खुश करने के काम में फँसाए रखता हूँ ।

अजनबी—दूसरे ?

सेठ—दूसरे ज्योतिषी हैं । वे भी पढ़े-लिखे हैं । मैं इनको आकाश में लटका रखता हूँ । ये देखते रहते हैं कि कोई ग्रह

मेरी ओर बुरी नजर से तो नहीं देख रहा है । गरीबों को बहका रखने में ये भी बड़े सहायक होते हैं ।

[अजनबी हँसकर सेठ के चेहरे को आश्चर्य से देखता है ।]

अजनबी—और कवि से आप क्या काम लेते हैं ?

सेठ—वह गरीबों की कामाग्नि में फूँक लगाता है । वह अधेड़ों और वृद्धों को सेठ के सुखों की ओर से मुँह मोड़कर चलने के लिए त्याग, वैराग्य, संसार की असारता और भक्ति-भाव के भजन और गाने बना देता है, जिन्हें गा-गाकर वे सेठ के सुखों को तुच्छ समझते रहते हैं ।

अजनबी—और जवानों के लिए ?

सेठ—जवानों के लिए रसीले गाने; जो उनके शरीर में काम को जगाकर उन्हें जवान् औरतों की ओर हर वक्त ढकेलते रहते हैं ।

अजनबी—उनका प्रचार कैसे होता है ?

सेठ—आजकल तो ज्यादातर सिनेमा-घरों से । गरीबों की बची-खुची पूँजी उड़ा लेने के लिए हमने जो सिनेमा-घर खोल रखे हैं, कवियों के रसीले गाने वहीं से तो चारों ओर फैलते हैं ।

अजनबी—कभी देखेंगे ।

सेठ—हाँ जरूर देखियेगा । देश में काम-देवता का कोई तीर्थ-स्थान नहीं था । हम लोगों ने उसे हर एक शहर में स्थापित कर दिया है । वहाँ होकर ही वेश्याघरों की राह है । मनुष्य के शरीर में कामाग्नि तो हमेशा जलती ही रहती है, कवि

लोग उसमें लपटे उठाने के लिए फूँक मारा करते हैं ।

[बाहर से किसी के गाने का आवाज आ रही है । दोनों ध्यान से सुनने लगते हैं]

गान

मारे डारै कटीली नजरिया रे ।

खाना न भावै, पीना न भावै,

भावै न रात निदरिया रे ॥ मारे डारै० ॥

आओ न गोरी जियरा जुड़ाओ,

सूनी पड़ी है सेजरिया रे ॥ मारे डारै० ॥

सेठ—मुन रहे हैं न ? कवि का यही चमत्कार है, जो नौजवानों को सेठ की राह पर चलने से रोके रखता है । उनमें से किसी के मन में कभी सेठ बनने का हौसला उठता भी है, तो उसे दवा देने के लिए भी कवि ने छंद बना दिए हैं ।

अजनबी—[उत्सुक होकर] क्या ?

सेठ—सुनिए—

राम भरोखे बैठ कर, सबका मुजरा लें ।

जाकी जैसी चाकरी, ताको तैसा दें ॥

और—

रूखा सूखा खाइके, टंढा पानी पी ।

देख पराई चूपड़ी, मत ललचावे जी ॥

सेठ बनने के लिए कभी कोई सिर उठाता है, तो ये दोहे फोरन्, वहीं उसके सिर को जमीन पर पटक देते हैं । रोग की दवा बिलकुल ही नजदीक रख दी गयी है न ?

अजनबी—[हँसकर] आप तो बड़े चमत्कारी पुरुष हैं। अच्छा, कवि के छंदों को गरीबों में फैलाता कौन है ?

सेठ—रमतेराम। वे सदा धूमते ही रहते हैं।

अजनबी—ये रमतेराम कौन हैं ?

सेठ—जिनके घर में कुछ खाने को नहीं होता, वे घर से भाग निकलते हैं और साधु के कपड़े पहनकर भीख माँगने लगते हैं। वे रमतेराम कहलाते हैं। हमलोग उनको पालकर उनसे प्रचार का काम लिया करते हैं।

अजनबी—उन्हें आप देते क्या हैं ?

सेठ—पूरा आराम। रहने के लिये पक्के मकान, जिन्हें धर्मशाला कहते हैं; खाने के लिये सदाब्रत-रोटी, दाल, भात, घी; पहनने के लिये अँचले, धोतियाँ, ओढ़ने के लिये कम्बल, बिछाने के लिये मृगछाला, पानी पीने के लिए कमण्डल। इनके सिवा जीवन की अन्य जरूरी चीजें उन्हें सारे देश में भक्तों से मिलती रहती हैं। और कथावाचक और धर्मोपदेश गरीबों को उदाहरण दे-देकर समझाते रहते हैं कि साधु-संत के वेश में कोई अभ्यागत आवे तो उसे अन्न, जल और ठहरने की जगह जरूर दो; ऐसा करने से स्वर्ग मिलेगा; नहीं तो नरक में पड़ोगे।

अजनबी—और पंडित क्या काम करते हैं ?

सेठ—पण्डित स्तोत्र बना-बनाकर देते रहते हैं और उसका फल बताते हैं कि एक लाख, दो लाख, पाँच लाख, दस लाख बार जो स्तोत्र जपेगा, वह अगले जन्म में सेठ हो जायगा। इससे इस जन्म में तो उनसे हमारा पिंड छूट ही जाता है।

हम उनके लिए मन्दिर बनवा देते हैं, ताकि वे बस्ती से दूर, एकान्त में बैठकर जपें, जहाँ से सेठ का सुख दिखाई ही न पड़े।

अजनबी—[कौतूहल से] और पुजारी ?

सेठ—मन्दिर में पत्थर की मूर्तियाँ रखवा देता हूँ, पुजारी को उन्हीं से बाँध देता हूँ, वह अवतार की महिमा गाता है और अवतारों की मूर्तियाँ दिखाकर गरीबों में यह भाव भरता है कि भगवान अवतार लेंगे और पापियों का नाश करेंगे। वह पापी शायद सेठ होगा। पर मैं तो यह जानता हूँ कि मेरे जीवन में भगवान अवतार न ले पायेंगे।

[अजनबी हँसता है।]

अजनबी—क्या ईश्वर में आपकी श्रद्धा नहीं ?

सेठ—[उपेक्षा से] ईश्वर कोई होगा; पर मैं उसे जानता नहीं। सुना है, वह गरीबों ही में पैदा हुआ है और उन्हीं लोगों के बीच में रहता भी है। उसके नाम भी उसी प्रकार के हैं; जैसे—दीनदयाल, दीनबन्धु, अशरण शरण आदि। न वह सेठबन्धु है, न सेठनाथ। फिर हमारा उसका क्या सम्बन्ध ?

अजनबी—फिर आप किसकी उपासना करते हैं ?

सेठ—मेरा धर्मशास्त्र तो मेरा बही-खाता है, और इन्कमटैक्स आफिसर मेरा ईश्वर है; उसी का भजन, पूजन और परिक्रमा करता रहता हूँ। हृदय से मैं शून्य का उपासक हूँ।

अजनबी—शून्य का उपासक कैसा ?

सेठ—बैंक में अगर मेरे पास लाख रुपये हैं, तो यही लालसा बनी

रहती है कि उसके आगे एक शून्य और बढ़ जाय। वह बढ़ जाता है तो अगले शून्य का जप होने लगता है। इस तरह मेरा जीवन तो शून्य ही शून्य की आराधना में बीतता है। मुझे आप शून्यजीवी कह सकते हैं।

[अजनबी जोर से हँसता है ।]

अजनबी—आप तो बड़े मजेदार आदमी हैं।

[टेलीफोन की घंटी बजती है। सेठ उठकर टेलीफोन की चौकी के पास जाता है और टेलीफोन कान से लगाकर किसी से बात करता है।]

सेठ—[टेलीफोन में] पाँच सौ रुपये दे दो । [कुछ सुनकर] नहीं राजी होता तो दो सौ और दे दो । [फिर कुछ सुनकर] हजार माँगता है, तो दे दो साले को, पिंड छुड़ाओ। उसे यह कह दो कि वह मजदूरों की सभा में मौजूद रहे। मैं अभी आता हूँ । [टेलीफोन रखकर और मसनद के सहारे बैठकर घंटी बजाता है । आवाज सुनकर नौकर आता है । नौकरसे] ड्राइवर को बोलो, जल्दी मोटर लावे, मैं मिल में जाऊँगा । [नौकर जाता है । अजनबी से] चलिये आपको मिल-मजदूरों और मजदूरों के नेता का भी दर्शन करा लाऊँ ।

अजनबी—[हँसकर] यह साला कौन था ?

सेठ—पूछिये मत, मजदूरों का नेता। मजदूरों को बहकाकर उसने मिल में हड़ताल करा दी है। अब एक हजार रुपये चुपके से लेकर मजदूरों को शांत करने आयेगा। चलिये, देखिये, हमारी सभ्यता में कैसे-कैसे स्वर्गीय कुसुम हैं । [सेठ खूँटी

पर से कोट और पगड़ी उतार कर पहनता है और कमरे में बाहर जाता है। पीछे-पीछे अजनबी भी जाता है।]

॥

तीसरा दृश्य

स्थान—मिल के फाटक के सामने का मैदान ।

समय—दिन के दस बजे ।

[बहुत से मजदूर जमा हैं । कुछ नंगे बदन सिर्फ धोती पहने हैं, कुछ आधी बाँह का कुरता और धोती और कुछ धोती कुरता और सिर पर पगड़ी लपेटे हैं । भीड़ में कहीं-कहीं काले भण्डे भी दिखाई पड़ रहे हैं । ज्यादातर मजदूर जमीन पर बैठे हैं; उनके पीछे कुछ खड़े भी हैं । भीड़ के सामने थोड़ा हटकर एक पेड़ की घनी छाया में एक बड़ा-सा तख्त रक्खा है; उसपर दरी बिछी है । दरी पर एक मेज और तीन कुरसियाँ रखी हैं । पीछे की ओर मिल के बहुत से कर्मचारी खड़े हैं । फाटक पर हथियार-बन्द पुलिस और मिल के सिपाहियों का पहरा है । सेठ और अजनबी आते हैं । सेठ को देखते ही कुछ लोग काले भण्डे लेकर खड़े जाते हैं और तीन बार “पूँजीवाद का नाश हो” के नारे लगाते हैं । सेठ आकर बीच की कुरसी पर बैठ जाता है । उसकी बाईं ओर की कुरसी पर अजनबी बैठ जाता है । इसके बाद मजदूरों का नेता आता है और सेठ की दाहिनी ओर की कुरसी पर अकड़कर बैठ जाता है । नेता को देखकर भीड़ में जोश दिखाई पड़ता है । लोग बार-बार “पूँजीवाद का

नाश हो” के नारे लगाते हैं। नेता बाल संवारे हुए, चश्मा लगाये हुये, दाढ़ी-मूँछ-रहित, सफेद कुरता और पाजामा पहने हुये है।]

नेता—[उठकर] भाइयो ! थोड़ी देर के लिये शांत हो जाओ। सेठ जी कुछ कहना चाहते हैं, उसे सुन लो। फिर हम लोग अलग बैठकर उसपर विचार करेंगे।

[लोग शांत हो जाते हैं; सन्नाटा छा जाता है।]

सेठ—[उठकर] भाइयो ! मुझे यह सुनकर बड़ा खेद हुआ है कि मिल मजदूरों ने हड़ताल कर दी है। तुम्हारी माँगों पर विचार तो हो ही रहा था और अब हो भी चुका है। तुमको काम बन्द करने की जरूरत नहीं थी। एक दिन भी मिल का काम बन्द रहता है, तो उससे राष्ट्र की कितनी बड़ी हानि हो जाती है, इस पर गौर करना चाहिये।

भीड़ में से एक आवाज—अहाहा ! सेठजी को राष्ट्र की चिन्ता बहुत सता रही है।

[कुछ मजदूर हँसते हैं।]

सेठ—जो “पूँजीवाद का नाश हो” के नारे लगाते हो, यह विचार करके देखोगे तो गलत है। पूँजी के बिना तो काम चल ही नहीं सकता। वह किसी न किसी के पास रहेगी ही। चाहे वह मैं होऊँ, या सरकार या कोई और। तुम सोचते होगे कि पूँजी का बहुत-सा हिस्सा मैं खा जाता हूँ। यह भी गलत है। धन जितना गले के अन्दर जाय, वही अपना; बाकी तो सब भगवान का है। मुझे तो उसका एक जमादार समझ लो, [भीड़ में से धन्य-धन्य की आवाज और जोर से हँसी।] तुम

गले के अन्दर कितना डालते हो ? एक सेर से कम नहीं डालते होगे ? और मैं एक छटाँक । सो भी डाक्टर जब पेट में जाता है, तब वह पचता है । अब तुम्हीं बताओ, पूँजी का ज्यादा हिस्सा कौन खा रहा है, एक मैं, कि चार हजार तुम ?

[भीड़ में हँसी] ॥

एक आवाज—मगर हम मोटर पर तो नहीं चढ़ते ।

सेठ—उसका भी खुलासा ले लो । मेरी पाँच मिलें हैं । सब में कुल मिलाकर चार हजार मजदूर काम करते हैं । हर एक मजदूर के पीछे एक परिवार है; जिसमें पाँच आदमी भी मान लो, तो बीस हजार आदमियों की रोटी की फिकर मुझे रोज करनी पड़ती है । इतना बड़ा बोझ पैदल चलकर नहीं उठाया जा सकता । तुम आठ घण्टे मेहनत करते हो, मैं कम से कम सोलह घंटे करता हूँ । फिर तुम्हारे मन में मेरे लिये द्वेष क्यों होना चाहिये ? तुमको यह सुनकर खुशी होगी कि कल रात में यह तै हो गया है कि मिल के सब कर्म-चारियों को साल में तीन महीने का बोनस दिया जाय । अब तुम लोग जाओ और मिल को चालू करो । मिल तो अन्नपूर्ण है, उसे बन्द करोगे तो न तुम्हीं को रोटी मिलेगी, और न मुझे ही । आयंदा हड़ताल करने से पहले मुझसे भी बात कर लिया करो । तुम, पूँजी और मैं, इन तीनों के सहयोग ही से राष्ट्र की उन्नति हो सकती है, किसी एक अकेले-से नहीं ।

[सेठ बैठ जाता है, नेता खड़ा हो जाता है ।]

नेता—भाइयो । तुम्हारी माँग मान ली गई; तुम्हारी जीत हो गई । अब तुम लोग मिल में जाकर काम करो । कुछ छोटी-मोटी बातें और रह गई हैं, जिनके लिये मैं लड़ता रहूँगा । मैं सेठ जी को धन्यवाद देता हूँ, कि उन्होंने समय-रहते बड़ी समझदारी से काम लिया ।

[भीड़ उठ खड़ी होती है और 'नय' के नारे लगाती हुई चली जाती है । नेता भी उसमें मिल जाता है ! तख्त पर सेठ और अजनबी बैठे रहते हैं । सेठ मिल के मैनेजर को, जो तख्त के पास ही खड़ा होता है, इशारे से बुलाता है । मैनेजर तख्त पर आ जाता है ।]

सेठ—मजदूरों को काम पर वापस ले लो, मिल चालू हो जायगी, तब मैं यहाँ से जाऊँगा । [मैनेजर जाता है । अजनबी से] देख लिया न, गरीब मजदूरों को कैसा ठगा जा रहा है ? मजदूरों का नेता तो अपना उल्लू सीधा करता रहता है, इससे बुद्धि की कोई बात तो वह जानबूझ कर ही नहीं समझता । हमारी सरकार तो स्वयं मजदूरों की भलाई में तत्पर है । शिकायत हो सकती है, तो हमारी; क्योंकि वह हमारी कम सुनती है ।

अजनबी—आपके देश के तो बहुत-से नेता पूँजीवाद के विरुद्ध हैं ।

सेठ—पर वे नहीं समझते कि पूँजीवाद का असली विरोधी कौन है ?

अजनबी—कौन है ?

सेठ—मैं हूँ । मैं किसी मजदूर के पास एक दिन के लिये भी पूँजी बनने नहीं देता हूँ ।

अजनबी—कैसे ? आप उनका मजदूरी तो देते ही हैं ?

सेठ—बस, उतनी ही देता हूँ, जितने से वे रात भर जीवित रहें और सबेरे फिर काम पर लौट आयें। अगर उनके पास पूँजी रहेगी और वे एक दिन भी घर बैठ रहेंगे, तो राष्ट्र की कितनी बड़ी हानि हो जायगी, इस पर कोई नेता विचार नहीं करता।

अजनबी—मगर सबके खर्च तो बराबर नहीं, किसी न किसी के पास तो कुछ बच ही जाता होगा ?

सेठ—उसे मेरे पूँजी-शोषक उड़ा लाते हैं।

अजनबी—कैसे ?

सेठ—कथावाचक, उपदेशक, साधु, संत, रमतेराम आदि का फेरा तो होता ही रहता है; यह तो आपको बता ही चुका हूँ। मजदूरों को वे यह भी तो सिखाते रहते हैं कि तीर्थ करो, खास-खास पर्वों में दूर-दूर के देवस्थानों में जाकर देवता का दर्शन करो, दान-पुण्य करो, साधु-सन्तों और महन्तों को भेंट चढ़ाओ इत्यादि, खर्च के बीसों मद अगले जन्म में सेठ बनने के लोभ में लपेटकर उनके दिमाग में तह पर तह वे जमाते रहते हैं, जिससे उनके पास पूँजी रह नहीं सकती। कुछ बच भी रहती है तो सिनेमा-घर ले लेता है। वह स्थायी पूँजी-शोषक है। सरकार के मूर्ख मन्त्री इस बात को नहीं समझते कि पूँजीवाद का असल विरोधी मैं हूँ, या वे ? वे केवल मुझ एक ही की पूँजी पर नजर रखते हैं, पर मैं चार हजार को हर महीने बिना पूँजी का करता रहता हूँ।

[सेठ हँसता है] ज़रा गौर तो कीजिए।

अजनबी—गरीबों को गरीब बनाये रखकर आप कहते हैं कि आप राष्ट्र की महान् सेवा कर रहे हैं, इस बात से सचमुच आपकी बुद्धि की विलक्षणता प्रकट होती है। नेता आपकी बात को क्यों नहीं समझते ?

सेठ—वे क्या समझें ? हाथी का भूल भौंरी करने वाले बनिये को घोड़ी पर रख दिया गया है। उनको तो मालूम ही नहीं कि सेठ किसे कहते हैं ? और मजदूर और किसान किसे कहते हैं ? वे लोग कमराजीवी हैं।

अजनबी—कमराजीवी क्या ?

सेठ—पाँच वर्ष की उम्र में वे स्कूल के कमरे में बैठा दिये गए, वहाँ से हाई-स्कूल, कालेज और यूनिवर्सिटी के कमरे में पहुँचे, कपड़े पहनने, विदेशी भाषा बोलने, बाल सँवारने, बात बनाने और आचार-विचार के बन्धन से मुक्त होने की कला में निपुण हो गये और अगर आफिस का कमरा नहीं मिला तो किराए का ले लिया। नेता बनकर बैठ गए। कहीं दूर जाना हुआ तो रेल के कमरे में बैठ गए; कुछ पैसे बचा लिए या कहीं से कुछ पा गये, तो चार पहिया वाला टीन का कमरा, जिसे मोटरकार कहते हैं, खरीद लिया। कुछ और ऊँचे उठे, तो हवाई जहाज के कमरे में उड़ने लगे। इस तरह पाँच वर्ष की उम्र से पचास साठ वर्ष की उम्र तक जो कमरे से कमरे ही में चक्कर लगाता रहा हो, वह नेता हो जाय तो वह क्या समझेगा कि समाज क्या है ? और समाज जिस साँचे में ढला है, वह साँचा कैसा है ? तथा किसानों

और मजदूरों का वर्तमान जीवन कैसा है ? और वह केन्द्र कहाँ है, जहाँ बैठकर उनकी उन्नति आसानी से की जा सकती है ?

अजनबी—[गंभीर होकर] आप ठीक कह रहे हैं । [कुछ सोचकर] किसी युक्ति से आप मजदूरों के नेता को भी वश में क्यों नहीं करते ?

सेठ—वह धूर्त शास्त्रों का पंडित जो नहीं । न उसे परलोक का भय है, न पुनर्जन्म का भरोसा और न ईश्वर के अवतार लेने का विश्वास । उसका इलाज तो बस, चाँदी की गोलियाँ हैं । वह सेठ के किले की कमजोर जगह को जान गया है । वह दुष्ट घोर नरक में पड़े ।

अजनबी—हाँ, महंत के वारे में तो आपने कुछ बताया ही नहीं ।

सेठ—महंत बड़े काम का प्रचारक होता है । हजारों को वह चेला मूँड लेता है और सबको लोक-परलोक की चिंता में फँसाए रखकर मेरी सड़क साफ किये रहता है; वह हमसे ज्यादा ठाट-बाट से रहता है और जो सुख भोगने में सेठ को संकोच होता है, उसे तो वह दिन-दहाड़े भोगता है ।

अजनबी—आपके किसी धर्माचार्य ने तो कहा है कि ऊँट अगर सुई के छेद में से निकल सके तो भी धनी लोग स्वर्ग नहीं जा सकते ।

सेठ—[हँसकर] मुझे उस मूर्ख धर्माचार्य की बुद्धि पर हँसी आती है । अरे, स्वर्ग के जिस सुख की उसने कल्पना कर रखी है, वह तो जहाँ धनी रहेगा, वहीं आ जायगा; बस, पैसा

चाहिये ।

अजनबी—[मन में] जान पड़ता है, पैसे के भी मुँह होता है ।

आदमी उसे खाता है, मौका पाता है तो वह आदमी को खाने लगता है । [प्रकट] पैसे से पुण्य के काम भी तो हो सकते हैं ?

सेठ—नहीं; पैसे में दो ही गुण हैं—बढ़ाते रहना और बचाते रहना ।

अजनबी—अस्पताल, स्कूल, धर्मशाले और कुँए-तालाब बनावाना क्या पुण्य-कार्य नहीं ?

सेठ—[हँसकर] ये सुनहले परदे हैं; इनकी आड़ में पैसों को बढ़ाने और बचाने ही का प्रयोग चलता रहता है ।

अजनबी—अच्छा, अब तो मैं आपसे बिदा लेना चाहता हूँ । आपने अपने पक्ष-विपक्ष की सभी बातें मुझे सच-सच बता दीं, इसके लिए आपको अनेक धन्यवाद है । [उठकर खड़ा हो जाता है ।]

सेठ—[उठकर अजनबी के कंधे पर हाथ रखकर] सुनिए, अजनबी जी ! मेरा तो सिद्धान्त यह है कि यह दुनिया मुझे बिना माँगे मिली है; जिसने दी है वह इसे कब छीन लेगा, इसका कुछ ठिकाना नहीं; इससे जो सुख भोगना चाहो, भोग लो, बाँदें पर मत टालो ।

[अजनबी हँसते हुए अभिवादन करता है, सेठ भी हाथ जोड़ता है । अजनबी जाता है । सेठ भी मिल की तरफ चला जाता है ।]

चौथा दृश्य

स्थान—डाक्टर का दवाखाना ।

समय—शाम, लगभग पाँच बजे ।

एक बड़े कमरे को लकड़ी के परदे से दो हिस्सों में बाँटकर एक हिस्से में दवाखाना है । दूसरे हिस्से में जाने के लिए एक कोने में दरवाजा है, जो बंद है । दीवारों से अलमारियाँ लगाकर रक्खी गई हैं, जिनमें दवाओं की शीशियाँ सजाकर रक्खी हैं । दीवारें बहुत पुरानी हैं और जगह-जगह उनकी पपड़ी निकली हुई है । कमरे के बीच में एक मेज और उसके अगल-बगल तीन चार कुर्सियाँ और दीवार से सटाकर एक बेंच रक्खी है । एक नौकर भाड़न से अलमारियों की सफाई कर रहा है । अजनबी का प्रवेश । अजनबी कमरे में आकर डाक्टर की कुर्सी के सामने मेज की दूसरी ओर की कुर्सी पर बैठ जाता है । कमरे के दूसरे हिस्से में एक पुरुष, एक लड़का और एक लड़की आपस में बातें कर रहे हैं, जो आवाजों से पहचाने जाते हैं । अजनबी ध्यान से सुनता है ।]

पुरुष—देखो, अब खाने में मक्खन बढ़ा दो, आजकल दौड़ना बहुत पड़ता है ।

स्त्री—घोड़े का दाना तो मैंने बढ़ा दिया है, कल से मक्खन भी ज्यादा ले लिया करूँगी ।

लड़की—[टुककर] पिताजी, मेरे कपड़े सब फट गये हैं ।

पुरुष—दस पाँच दिन और ठहरो, बेटी !—दीनबन्धु भगवान् ने मेरी पुकार सुन ली है । रोगों के दौरे शुरू हो गये हैं ।

लड़का—[हँसकर] क्या रोग भी दौरा करते हैं, पिताजी ?

पुरुष—हाँ, क्यों नहीं? टी० बी०, इन्फ्लूएंजा, मियादी बुखार, मलेरिया, संप्रहणो, गठिया, डायबिटीज, पीठ का फोड़ा, सन्निपात ज्वर, पागलपन, लकवा ये सब मौत के बड़े अक्रसर हैं। ये दौरे पर निकला करते हैं। आदमी के शरीर इनके डाक-बँगले हैं। कोई किसी डाक-बँगले में ठहर जाता है, कोई किसी में।

लड़का—[कोतूहल से] उनकी देख-रेख कौन करता है ?

पुरुष—डाक्टर। डाक्टर को उनका खानसामा समझ लो।

[लड़का-लड़की हँसते हैं।]

लड़की—वे डाक-बँगले में कबतक ठहरे रहते हैं ?

पुरुष—जबतक उनका जी चाहता है। डाक्टर उनको जबरदस्ती निकालने की कोशिश नहीं करता।

लड़का—अच्छा, पिताजी ! मोटर कबलीजियेगा ?

पुरुष—देखो बेटा, दीन-बन्धु दीनानाथ की कृपा हो जायगी तो आज ही। कल एक सेठ अपना इकलौता लड़का लेकर आया था। लड़के को सूखी खाँसी आती है। मैंने उसे टी० बी० बता दिया है। वह घबरा तो गया है। आज अभी आता ही होगा। बड़ी तोंद वाला सेठ है, मोटर का दाम तो दे ही जायगा।

[अजनबी कान लगाकर सुनता है।]

स्त्री—मुझे भी भतीजे के ब्याह में जाना है। कुछ कपड़े खरीदने हैं और कुछ गहने भी बनवाने हैं।

पुरुष—त्रिलोकीनाथ सब कर देंगे। शहर में इन्फ्लूएंजा बढ़ रहा

है । भगवान् ने उसके हाथ तुम्हारे लिए कपड़े और गहने भेजे हैं । आते ही होंगे ।

लड़की—पिताजी अबकी जाड़े में मेरे सब कपड़े नये करा दो ।

पुरुष—अभी तो जाड़ा एक महीना दूर है, बेटी-दयासागर का आसन मेरी ठंडी आहों से गरम हो चुका है । प्लेग, चेचक, कफ, खाँसी, सभी तो आ पहुँचे हैं । कोई मोटर ला रहा है, कोई हारमोनियम, कोई दरि, कोई कालीन, कोई शोफा, कोई फर्नीचर, कोई सिनेमा के टिकट और कोई गहने और कपड़े; जिसके लिए भगवान ने जो भेजा होगा, वह उसे मिले बिना न रहेगा ।

स्त्री—आजकल तुम बहुत दुबले होते जा रहे हो ।

पुरुष—चिंता से रोग बढ़ रहे हैं, दम मारने की फुरसत नहीं । चिन्ताओं से परेशान रहता हूँ । न तुम लोगों को सिनेमा दिखा सकता हूँ, न बच्चों को नाचना, गाना, बजाना, चित्रकारी आदि कलायें सिखाने के लिए मास्टर रख सकता हूँ । खाना खाने के लिए संगमरमर की एक मेज देख आया हूँ; दो पलंगों का आर्डर दे आया हूँ; अभी तक बड़े असामी हाथ में नहीं आ रहे हैं । पर अब देरी नहीं है । देखती जाओ, सब हो जायगा ।

स्त्री—शरीर की चिंता सबसे बड़ी है । मुझे सिनेमा और मोटर का शौक नहीं ।

पुरुष—घबराओ नहीं, दीनदयाल किसी सेठ या रईस के घर कोई बड़ा रोग भेज देंगे; बस, हमारे सब अरमान पूरे हो जायेंगे ।

अजनबी—[आप ही आप] यह तो बड़ा भयंकर आदमी है ।

[दवाखाने में एक सेठ एक छोटे लड़के को लेकर आता है और एक कुरसी पर बैठ जाता है । लड़का उसके पास खड़ा रहता है । उसे देखकर नौकर डाक्टर को खबर देने के लिए दूसरे कमरे में जाता है । डाक्टर और नौकर की बातचीत की आवाज सुनाई पड़ती है ।]

नौकर की आवाज—सेठजी अपने लड़के को लेकर आ गए हैं ।

डाक्टर—[खॉसी रानी मोटर लेकर आ पहुँची । नौकर से] सेठ को कुरसी पर बैठाओ, मैं अभी आता हूँ ।

[नौकर वापस आकर फिर अपने काम में लग जाता है ।]

अजनबी—[आप ही आप] सभ्य-समाज में मनुष्य का असली रूप क्या होता है, डाक्टर ने बता दिया । यह सेठ बेचारा फँसा । मिलवाला सेठ भी ऐसा ही फँसता होगा । [हँसता है ।]

[दरवाजा खोलकर डाक्टर का प्रवेश । डाक्टर सफेद पतलून और नीले रंग की कमीज पहने है । सिर के बाल सँवारे हुए हैं । चेहरा बहुत भरा हुआ नहीं है । रंग गेहुँवाँ; उम्र तीस के लगभग ।]

डाक्टर—[अजनबी से खीस निकालकर] अहा ! आप शायद अजनबी जी हैं । आज आपने मिलने के लिए लिखा था । [हाथ मिलाने के लिए फैलाता है । अजनबी उठ खड़ा होता है । सेठ भी उठ खड़ा होता है ।]

अजनबी—[हाथ मिलाते हुए] जी हाँ, मैं ही अजनबी हूँ ।

डाक्टर—आपको देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई । अच्छा, आप जरा बैठिये, मैं सेठजी के बच्चे को देख लूँ, तब आपसे बातें

करूँ ।

[अजनबी बैठ जाता है ।]

डाक्टर—[सेठ से मधुर स्वर में] बैठिए । [बच्चे की ओर देखकर]
यही बच्चा है ? बैठो बेटा, कुर्सी पर आराम से बैठ जाओ ।

[सेठ और बच्चा दोनों बैठ जाते हैं । डाक्टर भी बैठ जाता है ।]
सेठ—[गिड़गिड़ाकर] डाक्टर साहब ! यह मेरा इकलौता लड़का है । भगवान ने इसे मेरा बुढ़ापा खेने के लिए भेजा है ।

डाक्टर—चिन्ता न कीजिये, सेठ जी ! करुणासागर सबकी खबर लेते हैं । [बच्चे से] जरा खड़े होकर बटन तो खोलो; बेटा ! [बच्चा खड़ा होकर बटन खोलता है, और छाती पर से कपड़ा हटाता है । डाक्टर स्टेथसकोप लगाकर छाती की आवाज सुनता है ।] जरा जोर से साँस लो । [बच्चा जोर-जोर से साँस लेता है । डाक्टर उसकी पीठ के कपड़े हटाकर स्टेथसकोप से पीठ की आवाज सुनता है । फिर स्टेथसकोप को कान से हटाकर मेज पर रख देता है ।] जरा जीभ तो बाहर निकालो । [बच्चा जीभ निकालता है । डाक्टर बच्चे की आँखों के नीचे का चमड़ा अँगूठे से नीचे की ओर दबाकर आँखें देखता है ।] जरा नाखून तो दिखलाओ । [बच्चा दाहिने हाथ की उँगलियाँ सीधी करके डाक्टर के आगे कर देता है ।] अच्छा, बैठ जाओ । [बच्चा बैठ जाता है । डाक्टर भी बैठकर कुछ सोचने लगता है ।]

सेठ—बताइये डाक्टर साहब ! क्या बीमारी है ?

डाक्टर—[मुँह को गंभीर बनाकर] सेठजी ! रोग तो जीत गया है ।

एक तरफ का फेफड़ा तो क्षयरोग के कीड़ों से बिल्कुल भर गया है। दूसरे फेफड़े के एक कोने में भी कीड़े पहुँच गये हैं। शरीर में रक्त की भी कमी है।

[डाक्टर सेठ का मुँह देखने लगता है ।]

सेठ—[भयभीत होकर, आँखों में आँसू भरकर] डाक्टर साहब !

उसे अच्छा कीजिए, मैं जन्म भर आपका एहसान मानूँगा।

डाक्टर—अच्छा तो कर ही दूँगा, पर जरा समय लगेगा। बाहर से दो-तीन अनुभवी डाक्टरों को बुलाकर सलाह लेनी पड़ेगी।

सेठ—[चिंता-युक्त होकर] क्या खर्च बैठेगा ? डाक्टर साहब !

डाक्टर—[भौं सिकोड़कर लापरवाही से] कुछ ज्यादा नहीं, पाँच-छः हजार में सब हो जायगा।

सेठ—[चौंककर] पाँच-छः हजार ! यह तो बहुत है।

डाक्टर—[जरा कड़ी आवाज में] बहुत क्या है ? मैंने तो बहुत रियायत करके बताया है। आपका नाम भी तो बड़ा है।
पाँच हजार तो एक ही डाक्टर माँगेगा।

सेठ—(विनीत भाव से) और कुछ कम कीजिये।

डाक्टर—(स्खाई के साथ) सेठजी ! एक ही तो लड़का है; धन को क्या आप साथ ले जाएँगे ? यह खांसी अगर थम गई, तो दमा का रूप धर लेगी; फिर तो बच्चे की सारी जिंदगी खराब जायेगी। दमा और क्षय मामूली रोग नहीं हैं।

सेठ—अच्छा, पाँच हजार से अधिक न होने पावे।

डाक्टर—[मन में]

अंबा नीबू बानिया, गर दाबे रस देयँ ।

डाक्टर और वकील धुन, मुर्दा हू से लेयँ ॥

[प्रकट] कोशिश करके देखूँगा । डाक्टरों के खाने-पीने
ठहरने, मोटर और रेल का खर्च तो आप देंगे ही ?

सेठ—हाँ, इसे मैं अलग से दे दूँगा ।

डाक्टर—तो रुपये अभी भेजवा दीजिये । फीस पेशगी पाकर ही
डाक्टर जल्दी आयेंगे । मैं डाक्टरों को तार दिये देता हूँ ।
घबराइयेगा नहीं । मैंने रोग को समझ लिया है, अच्छा कर
दूँगा । इसे मैं अपना ही लड़का समझता हूँ ।

[सेठ प्रसन्न होकर हाथ जोड़ता है । उठकर लड़के के साथ जाता
है । डाक्टर टेलीफोन उठाता है । नम्बर मिलाता है ।]

डाक्टर—[टेलीफोन में] मैं डाक्टर रे बोल रहा हूँ । कल सुबह
आठ बजे के बाद छोटी, बड़ी और मझोले कद की तीन मोटरें
ट्रायल पर भेजिये । एक मोटर खरीदना चाहता हूँ । [टेली-
फोन रखकर, अजनबी से] अजनबीजी ! क्षमा कीजिएगा,
यह बड़े ही भक-भक का पेशा है । आपको देर तक बैठना
पड़ा । अब मैं आपकी सेवा में हाजिर हूँ ।

अजनबी—कोई दर्ज नहीं, मैं कुछ सीखता ही रहा । [जिज्ञासा के
स्वर में] इस देश में रोगियों की सेवा का भी मूल्य लिया
जाता है ?

डाक्टर—खूब कसकर । भगवान के इस मन्दिर को वे लापरवाही
से गंदा क्यों करते हैं ?

अजनबी—[मन में] ओहो ! डाक्टर तो भगवान की सृष्टि का

रक्त भी बन रहा है । [प्रकट] क्या सचमुच सेठ के लड़के को क्षय रोग है ?

डाक्टर—[हँसकर] नहीं, मामूली खाँसी है । लेकिन सेठ बड़ा ठग और अव्वल दर्जे का कंजूस है । आज मुश्किल से पंजे में आया है ।

अजनबी—लड़का कितने दिनों में अच्छा हो जायगा ?

डाक्टर—देखिये साहब ! जबतक सेठ से पैसा निकलता रहेगा, तबतक लड़का बीमार हो रहेगा । रोगों से मेरा क्या बैर ? वे मेरे लिये सुख लाते हैं, मुझे खाना कपड़ा देते हैं, मैं उन मेहमानों को घर से क्यों खदेड़ूँ ?

अजनबी—अर्थात् डाक्टर रोगी को को दंड देकर छोड़ता है । दंड पाकर निर्यनता के कारण वह दूसरे रोगों का शिकार हो जाता होगा; फिर किसी दूसरे डाक्टर का भाग्य बनकर चमक पड़ता होगा ?

डाक्टर—हाँ, यह चक्र तो चलता ही रहता है ।

अजनबी—मगर गरीब रोगियों पर तो आप दया करते होंगे ?

डाक्टर—इस पेशे में दया नाम की कोई चीज नहीं । जबतक दवा का दाम मिलता रहता है, लेता रहता हूँ । जब देख लिया कि रोगी ऊबकर दूसरे डाक्टर के पास जाना चाहता है, मुझे बदनाम करेगा, तब दो-तीन खुराक में रोग निकाल देता हूँ । यही दया समझिये ।

अजनबी—आपके देश में रोगों, रोगियों और द्यक्टरों की संख्या लगातार बढ़ रही है ।

डाक्टर—हर साल सैंकड़ों डाक्टर नये निकलते रहते हैं । रोग और रोगी न बढ़ें, तो डाक्टर खायँ क्या ? हमें खर्चीला जीवन बिताना भी तो सिखा दिया जाता है । पेट के लिये हम जितना खर्च करते हैं, उससे दस गुना बाहरी टीमटाम में लगता है । दया करेंगे तो दया हमीं को मार डालेगी । [हँस कर] और शरीर सदा नीरोग रहे तो आदमी ऊब जा सकता है । रोग आते रहें, जाते रहें तो घर में जरा चहल-पहल बनी रहती है । रोग भी हमारी सभ्यता के एक आवश्यक अंग हैं ।

अजनबी—आपका असली सिद्धान्त भी तो कुछ होगा ?

डाक्टर—पैसा कमाना । डाक्टरों का सिद्धान्त दो-रुखी होता है ।

भीतर का कुछ और, बाहर का कुछ और ।

अजनबी—भीतर का क्या है ?

डाक्टर—न रोग मरे, न रोगी मरे ।

अजनबी—और बाहर का ?

डाक्टर—सर्वे सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः ।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग्भवेत् ।

अजनबी—[हँसकर] आप तो रोगों का बीज बोते हैं ।

डाक्टर—हाँ, बातों का हल चलाकर शक का बीज बोते हैं । अच्छी नर्म जमीन मिलती है, तो बीज उग आते हैं और हमें अच्छी फसल दे जाते हैं । ऊसर में हम बीज बोते ही नहीं ।

अजनबी—ईश्वर की कृपा है कि मेरे देश में अभी डाक्टर नहीं पहुँचे ।

डाक्टर—[हँसकर] मुझे ले चलिये न? फिर देखियेगा, आपके देश में एक भी आदमी ऐसा न मिलेगा, जिसके शरीर में मैं कोई न कोई रोग न बता दूँगा । [दोनों हँसते हैं ।]

अजनबी—[मन में] पैसे ने दया को खा लिया है । [प्रकट उठकर] आपने कृपा करके अपना बहुत सा समय दिया और बड़ी स्पष्टता से बातें बताईं । आपको धन्यवाद है । अब आज्ञा चाहता हूँ । [प्रणाम करके जाता है । डाक्टर दरवाजे तक पहुँचाकर, हाथ मिलाकर विदा करता है और दरवाजा बन्द कर लेता है ।]

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—वकील के घर का बरामदा ।

समय—प्रातःकाल ।

[बरामदे के बीचोबीच एक मेज के पास कुर्सी पर मामूली घरेलू पोशाक—कुरता और पाजामा पहने वकील बैठा है । सामने एक बेंच पर कुछ मुवक्किल बैठे हैं । पास ही जमीन पर कमल धिछाकर और सामने लकड़ी का एक पुगना और स्याही के दागों से भरा हुआ बक्स रखकर वकील का बड़्ढ़ा मुँशी बैठा है । वह एक पुराना चश्मा, जिसकी एक कमानि टूटी है और उसकी जगह तागा बाँधे हुये है, आँखों पर लगाये है । चश्मे के ऊपर से कभी-कभी वह वकील को और कुछ पूछना होता है तो मुवक्किल को भी घूर लिया करता है । दो-तीन मुवक्किल उसके

पास भी बैठे हैं । मुन्शी कुछ लिख रहा है । वकील की दाहिनी ओर कुर्सी पर अजनबी बैठा है ।]

वकील—[अजनबी से] मुवक्किलों से निपट लूँ, तो आपसे बातें करूँ । [एक मुवक्किल से] तुम्हारा क्या मामला है ?

मुवक्किल—सरकार ! मैं एक मामले में आपसे राय लेने आया हूँ ।

वकील—उसकी फीस देनी पड़ेगी ।

मुवक्किल—[धिधियाकर] धर्मावतार ! मैं बहुत गरीब आदमी हूँ; मुसीबत में पड़ा हूँ ।

वकील—अच्छा, जल्दी बताओ, क्या मुसीबत है ?

मुवक्किल—मेरे गाँव में एक चमार रहता है, वह राह-चलते मुझे गालियाँ देता है और मारने की धमकी देता है, मेरा खेत ले लेना चाहता है । क्या करूँ ?

वकील—कोई दफा चला दो, अकल ठिकाने आ जायगी ।

मुवक्किल—कौन-सी दफा चलेगी ? सरकार !

वकील—वीसों दफायें हैं । जिसका पेट तुम भर दोगे, वही चलने लगेगी । कभी उसने तुमको मारा-पीटा है ?

मुवक्किल—एक साल हुआ, उसने मेरे सिर से घड़ा उतार लिया था । मैं दाम माँगने लगा, तो मारने दीड़ा ।

वकील—बड़ा भारी जुर्म है । पर इतना पुराना मामला नहीं चलता । कौन हो तुम ?

मुवक्किल—मैं तो कुम्हार हूँ, साहब !

वकील—जब तुम्हारा उसका बैर है तो भगड़ा हर हफ्ते होला होगा न ?

मुवक्किल—होता ही है, साहब !

वकील—तो तुम एक हफ्ता हुआ, सिर पर कई घड़े लेकर बेचने जा रहे थे ।

मुवक्किल—हाँ, साहब !

वकील—जब चमार के दरवाजे पर पहुँचे, तब उसने तुम्हारे सिर पर से एक घड़ा उतार लिया ।

मुवक्किल—हाँ, हजूर !

वकील—तुमने दाम माँगा, वह गालियाँ देता हुआ मारने दौड़ा ।

मुवक्किल—[समझकर] हाँ, मेरे मुँह में एक थप्पड़ मारा ।

वकील—और तुम्हारे सिर के बाकी घड़ों को भी तो ढकेलकर गिरा दिया होगा ?

मुवक्किल—[समझकर] हाँ, साहब ! मेरे तो सारे घड़े फूट गये, मैं मुँह के बल धरती पर गिर पड़ा ।

वकील—और तुम्हारी कुहनी में चोट आई ।

मुवक्किल—हाँ, धर्मावतार ! ऐसा ही हुआ ।

वकील—कोई गवाह भी है ?

मुवक्किल—उस वक्त आसपास तो कोई गवाह नहीं था, साहब !

वकील—गवाह ही तो मुकदमे की टांगें हैं । बिना टाँग का मुकदमा कैसे चलेगा ?

मुवक्किल—[सोचकर] कुछ दूर पर मुखिया का नौजवान लड़का घोड़े पर चढ़कर जा रहा था ।

वकील—उसको नजदीक से जाना पड़ेगा । और अदालत में घोड़े पर चढ़कर क्यों आयेगा ?

मुवक्किल—तब घोड़ा कहाँ जायगा ?

वकील—जहन्नम में । घोड़ा मुकदमे को चौपट कर देगा । जिरह में कोई गवाह कहेगा, पीले रंग का था, कोई कहेगा, नीले रंग का, और कोई कहेगा कि सब्जा था । युनिवर्सिटी से ताजा आये हुए नौजवान डिप्टी कलक्टर समझेंगे कि घोड़ा हरे रंग का था । घोड़े के रंग से मुकदमा बदरंग हो जायगा ।

मुवक्किल—तो अदालत में घोड़े पर चढ़कर न आयेंगे, साहब !— थोड़ी देर न चढ़ेंगे तो क्या थक जायेंगे ? और क्या मेरी बात सच नहीं मानी जायगी ?

अजनबी—[हँसकर मन में] यह वकील का घर है, या भूठ बोलना सिखाने का स्कूल ?

वकील—नहीं; गवाह ही ईमानदार माना जाता है । कम से कम दो गवाह चाहिए । मुखिये का लड़का कहेगा कि वह उधर से आ रहा था; उसने चमार को मारते हुए अपनी आँखों से देखा और रोका भी । कहेगा न ?

मुवक्किल—मुफ्त में तो न कहेगा, कुछ लेकर जरूर कह देगा ।

वकील—अच्छा, दूसरा गवाह ?

मुवक्किल—[सोचकर] गाँव में कुछ लोग गवाही देने का पेशा करते हैं, उनसे पूछूँगा । और कोई न मिला तो ?

वकील—मुंशीजी देंगे; पर महंगा पड़ेगा । [मुंशी से] जरा सूची देखिये तो दफा ३२३, ४२६, और ५०४ के लिए कौन-कौन से गवाह होशियार हैं ? [मुंशी सूची निकालकर देखता है । मुवक्किल से] मुंशीजी से दरखास्त लिखा लो और गवाहों

के नाम और पते लेकर उनसे मिलकर खुद तै कर लो ।

अजनबी—[मन में] वकील तो घटना भी बना देता है और गवाह भी दे देता है । इस देश में एक से एक बढ़कर चमत्कारी जीव हैं ।

मुवक्किल—कुल कितना खर्च बैठेगा ? सरकार !

वकील—फीपेशी पाँच रुपये तो मैं लूँगा । बाकी मुंशीजी हैं, सरकारी स्टाम्प है, पेशकार हैं, अहलमद हैं, ये सब खर्च मुंशीजी बता देंगे ।

मुवक्किल—कुल कितनी पेशियाँ होंगी ?

वकील—मामला तो दो ही तीन पेशियों का है, पर तुम चमार को दौड़ा-दौड़ा कर हैरान करना चाहोगे, तो पेशकार को खुश करना होगा ।

अजनबी—[मन में] इस देश में गरीब को तो न्याय मिल ही कैसे सकता होगा ?

मुवक्किल—[मुंशीजी की ओर देखकर] आप कुछ अंदाज में बता दें ।

मुंशीजी—[चश्मे के ऊपर से ताकते हुए] यही पचास-साठ रुपये में चमार राम की कुछ मरम्मत हो जायगी ।

मुवक्किल—मगर मेरी तो अच्छी तरह हो जायगी । चार पैमे का घड़ा, सो भी फूट गया, अब जुड़ नहीं सकता, उसके लिये साठ रुपये घर से और दूँ । दमड़ी की घोड़ी, टका बिदाई यही है ।

वकील—[आँखें गुंघर कर] और इज्जत का दाम क्या है ?

मुवक्किल—वह तो घर-द्वार और खेती-बारी बेचकर जब भीख माँगने निकलूँगा, तब मालूम होगा ।

वकील—[कुढ़कर] भाग यहाँ से । वक्त खराब करने आया है ।

[मुन्शी से] आज पहले-पहल यह मनहूस कहाँ से आ गया ?

[मुवक्किल उठकर जाता है । अजनबी मुसकुराता है ।]

अजनबी—[मन में] कानून ही ऐसा बना मालूम होता है कि झूठ बोलना सिखाये बिना चल नहीं सकता ।

वकील—[दूसरे मुवक्किलों से] आप लोग कचहरी में चलिए, वहीं मुकदमें समझूँगा । [एक मुवक्किल से] देखिए, मैंने आपका मुकदमा समझ लिया है । आपका यह बयान होगा कि मुद्दैया ने जो लड़का पेश किया है, वह उसका असली लड़का नहीं है । उसके तो लड़का हुआ ही नहीं । इसके बाद मुद्दैया की डाक्टरी जाँच कराई जायगी । डाक्टर से यह सर्टिफिकेट लेना होगा कि मुद्दैया के कभी संतान ही नहीं हुई ।

मुवक्किल—डाक्टर दे देंगे ?

वकील—पैसा सब कुछ दिला देगा ।

[मुवक्किल अपने बपड़े और कागज-पत्र समेट कर जाते हैं ।

मुन्शी भी बक्स में कागज रखकर उसे उठा ले जाता है ।]

अजनबी—[हँसकर] मुझे तो यह किसी स्कूल का-सा काम लगा । हाकिम दोनों पक्षों के गवाहों का इम्तहान लेते होंगे जिधर के गवाह पास हो जाते होंगे, उसी पक्ष की जीत होती होगी । ऐसा ही है न ?

वकील—[हँसकर] बिल्कुल ऐसा ही ।

अजनबी—तब हाकिम न्याय कैसे करता है ?

वकील—न्याय तो करता ही नहीं; फैसला करता है। अंधे की लाठी है, लग गई तो लग गई।

अजनबी—हाकिम मौके पर जाकर जाँच क्यों नहीं करता ?

वकील—कानून नहीं। वह कहे का फैसला करता है, किए का नहीं।

अजनबी—और कहना आप लोग सिखा देते हैं ?

वकील—क्या करें ! अजनबीजी ! कुछ नमक-मिर्च लगाए बिना कोई बात कानून के गले उतर ही नहीं सकती।

अजनबी—जब किए का कोई देखने वाला नहीं, तब लोग मनमानी सच-भूठ कहना सीख जाते होंगे ?

वकील—रही-सही कसर हम लोग पूरी करा देते हैं।

अजनबी—फैसले के बाद क्या भगड़ा खत्म हो जाता है ?

वकील—कानून से तो वह कभी खतम ही नहीं हो सकता। एक मामूली भगड़ा अगर मुवकिल खड़ा रहे, तो कई पीढ़ियों तक चलाया जा सकता है।

अजनबी—वकील तो सभी शिक्षित होते हैं, उनको इस पेशे से घृणा नहीं होती ?

वकील—घृणा करें तो शिक्षा के साथ जो, खर्चीली रहन-सहन सिखा दी जाती है, उसका पेट कैसे भरे ? पेंच के ऊपर पेंच तो लगी हुई है।

अजनबी—तो कानून आपको विवश करके आपसे भूठ और फूट का प्रचार कराता है ?

वकील—यह कानून तो ऐसा ही है ।

अजनबी—भूठी बातों से मन में घृणा नहीं पैदा होती ?

वकील—हृदय में जब पैसे का प्रकाश फैल जाता है, तब सच और भूठ में अंतर वैसा ही नहीं रह जाता, जैसे ब्रह्मज्ञान से मनुष्य पशु, पक्षी, कीट-पतंग, जड़ और चेतन का भेद निकल जाता है । सच और भूठ तो वास्तव में हवा के बबूले हैं, फेफड़े की थोड़ी सी हवा में अक्ल को दो-चार बूँदें डालकर मुँह से निकाल देते हैं, और बेंच देते हैं । इससे न भूठ बोलने का पाप हमें लगता है, न सच बोलने का पुण्य ही हमें मिलता होगा । हाँ, दाम हम दोनों प्रकार के बबूलों का ले लेते हैं । भूठ बोलने से भी किसी न किसी का उपकार तो हो ही जाता है । पाप-पुण्य से निर्लिप्त रहना वकील के दरावर और कोई नहीं जानता ।

अजनबी—[कुछ देर चुप रहने के बाद नम्रतापूर्वक] आपको धन्यवाद है । क्षमा कीजिएगा, आपका बहुत समय लिया, अब आज्ञा चाहता हूँ । [उठ खड़ा होता है]

वकील—[उठकर] मुझे भी आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई । [अजनबी हाथ जोड़कर बरामदे से बाहर चला जाता है । वकील पीछे के दरवाजे से अन्दर चला जाता है ।]

छठा दृश्य

स्थान—मन्दिर का जगमोहन ।

समय—दिन के लगभग चार बजे ।

[महन्त मन्दिर के मुख्य द्वार के बगल में चौकी पर गद्दी और मृगछाला या बाघम्बर बिछाकर एक छोटे से मसनद के सहारे बैठे हैं । शरीर गौरवर्ण, स्थूल, सिर दाढ़ी, मूँछ मुँडे हुए, चेहरा भरा हुआ, आँखें रसीली, उम्र चालीस और पचास के बीच में । पहनावा गेरुवे रंग की धोती और दुपट्टा, वस्त्र रेशमी, गले में बड़े दानों की मालायें और गाथे पर तिलक । पास ही चांदी का छोटा-सा पीकदान रक्खा हुआ है । सामने चेलों और भक्तों के लिये दरी बिछी है । महन्त पान खा रहे हैं । एक तरफ कुछ दूरी पर एक सूरदास तानपूरे पर भजन गा रहा है । अजनबी का प्रवेश । अजनबी सामने आकर और झुककर प्रणाम करता है ।]

महन्त—[गौर से देखकर] क्या आप अजनबीजी हैं ?

अजनबी—जी हाँ, मेरा ही नाम अजनबी है ।

महन्त—बैठिये, मैं आप ही की राह देख ही रहा था । [अजनबी दरी पर बैठ जाता है ।] आप प्रसन्न हैं ?

अजनबी—[नम्रता से हाथ जोड़कर] आपके आशीर्वाद से प्रसन्न हूँ । [मन में] महन्तजी का ठाट-वाट तो सेठों से बढ़कर है । ये दिमागी मिल के सेठ हैं ।

महन्त—[सूरदास से] सूरदासजी ! अब एक भजन अजनबीजी को सुनाकर बस कीजिए । [सूरदास तानपूरा दूनदुनाकर गाता है ।

एक नौकर हाथ में एक छोटी शीशी लेकर आता है। उसमें लाल रंग का तरल पदार्थ है।]

सूरदास—[गाता है]

हरि को करो समरन भाई, तन धन जीवन मान बढ़ाई ।

हरि के सेवक साधु सन्त की सदा करो सेवकाई ।

भवसागर से पार करेंगे, छोड़ो आस पराई ॥ हरि को० ॥

अजनबी—[मन में] यहाँ भी सेठ ही का काम हो रहा है। इसे तो पूँजीवाद के विनाश का एक स्कूल ही कहना चाहिये।

महन्त—[नौकर से] पहले सूरदासजी को बाहर पहुँचा आओ, तब लगाना। [नौकर सूरदास को बाहर पहुँचाकर लौट आता है। महन्त दोनों पैर चौकी के नीचे कर देते हैं। नौकर शीशी का तरल पदार्थ निकाल-निकालकर महन्त के पैरों की उँगलियों में लगाता है।]

अजनबी—[मन ही मन] जान पड़ता है, महन्तजी की उँगलियाँ में कोई रोग हो गया है। हो सकता है, तीन बार स्नान करते होंगे, जल में खड़े होकर जप करते होंगे, इससे उँगलियाँ सड़ने लगी होंगी। [पछता है] क्या कोई दवा लगवा रहे हैं, महाराज !

महन्त—नहीं अजनबीजी, यह हिने का इत्र है। भक्त लोग, जो ज्यादातर किसान और गरीब होते हैं, आकर मत्था टेकते हैं, तब उनकी नासिका को कुछ सुगंध मिल जाय, इसलिए वहाँ इत्र लगा देता हूँ। वे बेचारे इत्र कहाँ पाते होंगे ?

अजनबी—[मुस्कुराकर] परोपकार की ऐसी सूक्ष्म कल्पना तो ब.वि.

भी नहीं कर सकता ।

महन्त—भक्तों के सुखों पर तो ध्यान रखना ही पड़ता है ।

[नौकर इत्र लगाकर चला जाता है । कुछ भक्त आते हैं । गाँवों के रहने वाले, नंगे बदन. सिर्फ धोती पहने हुए, जिनमें कुछ स्त्रियाँ भी हैं । एक-एक करके सब महन्त के पैरों पर एक-एक रुपया रख-कर पैर से माथा छुवाते हैं । सब हाथ जोड़कर सामने बैठे-बैठे महन्त को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं ।]

महन्त—[भक्तों से] तुम सब सुख से तो हो ?

भक्त—हाँ, महाराज ! आपके आशीर्वाद से ।

महन्त—साधु-सन्त की सेवा करो; वे भगवान से तुम्हारा दुःख दूर करने की प्रार्थना करेंगे ।

भक्त—जो कुछ बन पड़ता है, करते ही हैं, महाराज ! [महन्त सब को थोड़ी-थोड़ी इलायची प्रसाद के रूप में देते हैं । भक्त लोग प्रसाद लेकर जर्मन से माथा छुवाकर प्रणाम करते और जाते हैं ।]

अजनबी—महाराज के कितने चेले हैं ?

महन्त—कई हजार हैं; और भक्त तो लाखों होंगे ।

अजनबी—[मन में] महन्त सचमुच सेठ का पक्का पूँजी-शोषक है । यह गरीबों की रही-सही पूँजी बिना परिश्रम किए उड़ा लेता है और वे गरीब ही बने रहते हैं । [कुछ सोचकर] पूँजीवाद का विरोधी होने का सेठ का दावा बहुत सच्चा है । [महन्त से] सेठ लोग भी तो आपके भक्त होंगे ?

महन्त—बहुत हैं । अखाड़े का खर्च तो उन्हीं के दान से चलता है ।

अजनबी—खर्च तो आपका बहुत बड़ा है ।

महन्त—सब भगवान चलाते हैं ।

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम ।

दास मलूका कहि गये, सबके दाता राम ॥

अजनबी—आपके उपदेशों से घूमने-फिरने वाले साधु-सन्तों के खाने-पहनने और टिकने की व्यवस्था तो हो ही जाती होगी ।

महन्त—श्रद्धा की खेती है; साधु-सन्त स्वयं बोते हैं और काटते रहते हैं ।

अजनबी—[मन में] सेठ की विचित्र माया है । [हँसता है ।]

महन्त—हँसी क्यों आई अजनबीजी ?

अजनबी—पैसे की प्रभुता देखकर ।

महन्त—पैसा तो प्रभु के माथे का मुकुट है । वही स्वर्ग तक ले जाता है, धनाद्धर्मं ततः सुखम् ।

[कुछ देर तक सन्नाटा रहता है]

अजनबी—[मन में] इस देश में किसान और मजदूरों को जैसे जादू मार गया हो । डाक्टर उनमें रोग फैलाकर, वकील फूट डालकर, सेठ उनको धन-हीन और महन्त मूर्ख बनाए रख कर उनका रक्त चूसते रहते हैं और वे कुनमुनाते भी नहीं । [एक साधु का प्रवेश । साधु के सिर पर लम्बे बालों का जूड़ा है । बाल सँवारे हुए हैं । माथे पर दो रंगों का तिलक है । एक धोती से सारा शरीर ढका हुआ है । महन्त को दण्डवत प्रणाम करके वह सामने खड़ा हो जाता है ।]

महन्त—[साधु से] कहाँ से आ रहे हो ?

साधु—माई को माई हुई है, माई को बुलाने गया था ।

महन्त—अच्छा जाओ । [साधु जाता है ।]

अजनबी—मैं नहीं समझा ।

महन्त—[हँसकर] साधु की स्त्री के कन्या हुई है । उसका नाल काटने के लिए साधु चमारिन को बुलाने गया था । साधु लोग स्त्री-मात्र को माई कहते हैं ।

अजनबी—[जोर से हँसकर] साधु को स्त्री कहाँ मिल गई ?

महन्त—भगवान की कृपा से साधु-सन्त को किसी वस्तु का अभाव नहीं रहता ।

अजनबी—[कुछ देर चुप रहकर मन में] यहाँ पैसे ने धर्म को खा लिया है । [प्रकट] अच्छा अब आज्ञा चाहता हूँ ।

महन्त—जाओ, सुख से रहो । कभी इधर आना हो तो भगवान् का दर्शन करके जाना । [अजनबी प्रणाम करके जाता है । महन्त भी उठकर मन्दिर के अन्दर जाता है ।]

सातवाँ दृश्य

स्थान—एक पक्ष के मकान के सामने का मैदान ।

समय—शाम ।

[मैदान में दूरी और जाजिम बिछी है । एक किनारे बीचोबीच एक तख्त रक्खा है । उस पर सफेद चादर बिछी है । तख्त पर एक चौकी है, जिस पर मोटा-सा ग्रन्थ रक्खा है । चौकी के साथ मोटे मसनद के सहार कथावाचक बैठे हैं । कथावाचक का शरीर मोटा, हलका श्यामवर्ण, तोंद

निकली हुई, धोती पहने, दुपट्टा ओढ़े हुये, चेहरा भरा हुआ, नाक मोटी, माथे पर तिलक, सिर घुटा हुआ, चोटी मोटी और लम्बी गाँठ दी हुई है। कथावाचक कथा कह रहे हैं। श्रोताओं में कुछ धनी लोग हैं, जो तख्त के पास कथावाचक के सामने बैठे हैं। साधारण गृहस्थ और गरीबों की संख्या अधिक है। अजनबी श्रोताओं के बीच में बैठा है।]

कथावाचक—आनन्दकन्द, सच्चिदानन्द, दुष्टनिकन्दन, भक्तउरचन्दन, सज्जन-मनरंजन, दुर्जन-गंजन, असुरारी, त्रैलोक्य विहारी, भगवान की जय हो, जय हो, जय हो। सब लोग बोलो।

सब—जय हो।

कथावाचक—दया सबसे बड़ा धर्म है। सब दान-पुण्य करो, साधु संतों का सत्संग करो, तब तुम्हारा कल्याण होगा।

[अजनबी के पास दो व्यापारी बैठे हैं। दोनों आपस में धीरे-धीरे बातें करते जाते हैं।]

पहला व्यापारी—[दूसरे से] चाँदी का भाव तो गिर रहा है।

दूसरा व्यापारी—मैंने तो कल कुछ खरीदी है।

पहला व्यापारी—[कथावाचक की ओर मुँह करके जरा जोर से] जरूर होना चाहिये। [दूसरे व्यापारी से धीरे से] सोने में तो मैंने कुछ कमाया था; जान पड़ता है चाँदी में वह कमाई निकल लायगी।

दूसरा व्यापारी—भाव अभी चढ़ेगा।

कथावाचक—मनुष्य का शरीर तो भगवान का मन्दिर है। क्या इसे पाप कर्म में लगाना चाहिए ?

पहला व्यापारी—[कथावाचक की ओर मुँह करके] जरूर चाहिये।

[फिर दूसरे व्यापारी से बातें करने लगता है ।] गल्ले पर से कंट्रोल हट गया तो भी गल्ला सस्ता तो हुआ नहीं ।

दूसरा व्यापारी—नई फसल आने पर हो जायगा ।

कथावाचक—संसार में चारोंओर दुःख ही दुःख व्याप्त हो रहा है । सुख तो भगवान की शरण में है । पाप से छुटकारा वहीं मिलेगा । अच्छे माता-पिता की संतान कहलाकर क्या पाप करना चाहिये ?

पहला व्यापारी—[कथावाचक की ओर मुँह करके] जरूर चाहिये ।
[फिर दूसरे से बातें करने लगता है । अजनबी मुस्कुराता है ।
अजनबी की दूसरी ओर दो किसान आपस में बातें कर रहे हैं ।]

एक किसान—[दूसरे से धीरे-धीरे] मेरी भैंस के पुट्टे पर कहीं खरोंच लग गई थी, वह पक आई, कीड़े पड़ गये हैं, क्या कोई दवा जानते हो ?

कथावाचक—पूर्वजन्म में जिसने दान-पुण्य किया था, वह इस जन्म में सुख कर रहा है । इसी तरह इस जन्म में जो गौ-ब्राह्मणों की पूजा करेगा, तीर्थों में जाकर देवदर्शन करेगा, खाने-पीने से बचा हुआ धन धर्म के कामों में लगायेगा, वह अगले जन्म में सुख करेगा । पाप की ओर मन को न जाने देना चाहिए ।

पहला व्यापारी—[कथावाचक की ओर मुँह करके] जरूर चाहिए ।
[फिर वह बात करने में लग जाता है । श्रोतागण उसकी ओर देखकर मुस्कुराते हैं ।]

अजनबी—[मन में] सेठ का काम हो रहा है । सचमुच सेठ

पूँजीवाद का सच्चा विरोधी है।

कथावाचक—जब किसी का मन धर्म की बात सुनने में नहीं लग रहा है, तब उसे बंद ही कर देना चाहिये।

पहला व्यापारी—जरूर चाहिये। [फिर वह बात करने में लग जाता है।]

[कथावाचक कथा समाप्त कर देते हैं। ग्रन्थ के पन्नों को समेटकर आरती करते हैं, शंख बजाते हैं, फिर एक भक्त आरती को थाली में रखकर श्रोताओं के सामने ले जाता है। श्रोता थाली में पैसे, रुपये, अठन्नी, चवन्नी, जिसकी जैसी श्रद्धा होती है, डालते हैं। आरती लेकर श्रोता चले जाते हैं। अजनबी भी यह खेल देखकर हँसता हुआ जाता है। कथावाचक उठकर अपने दो शिष्यों के साथ जाते हैं।]

आठवाँ दृश्य

समय—शाम

स्थान—गाँव का हाट [बाजार]

[अजनबी एक बनिये की दुकान पर एक कोने में बैठा है। एक नौजवान लड़का कई प्रकार की चीजें, जो गाँव वालों के नित्य की जरूरतों की होती हैं, छोटे-बड़े बर्तनों में सजाये बैठा है। पैरों के पास तराजू और छोटे-बड़े वाट रखे हैं। मैले-कुचैले कपड़े पहने एक स्त्री आती है। एक अँगोछे में एक सेर मटर बाँधे हुये है। उसे खोलती है और बनिये के सामने रखती है।]

स्त्री—एक पाव नमक दे दो ।

लड़का—बराबर का मिलेगा ।

स्त्री—और गुड़ !

लड़का—वह भी बराबर का मिलेगा ।

स्त्री—अच्छा, एक पाव नमक दे दो, बाकी का गुड़ ।

[बनिया मटर को तराजू में रखकर तौलता है ।]

लड़का—साढ़े तीन पाव है ।

स्त्री—एक सेर तो मैं तौलकर लाई हूँ ।

लड़का—तो क्या तराजू खा गई ? लेना हो तोलो, नहीं तो जाओ ।

[स्त्री इधर-उधर देखकर लाचारी का भाव दिखाती है ।]

स्त्री—अच्छा, दे दो ।

[अजनबी गौर से बातें सुनता और तराजू को देखता है । लड़का एक पाव नमक तौल देता है और नौ छटाँक गुड़ । आधा सेर के साथ आध पाव का बाट रखने के बदले एक छटाँक का बाट रख देता है । स्त्री बेचारी नहीं देखती । नमक और गुड़ ऋँगोले में बाँधकर स्त्री जाती है ।]

अजनबी—[मन में] यह सेठ का चच्चा है । अंगारे का गुण उसकी चिनगारी में भी होता है । पैसे ने इसे हाथ से छल करना सिखा दिया है ।

[लड़के का बाप आता है । कमर में मैली-सी धोती ऊलजलूल तरीके पर बाँधे हुये, नंगे बदन, गुम्बद-सी तोंद निकले, दूकान पर आकर खड़ा हो जाता है ।]

बाप—पाँच सेर गुड़ एक बोरी में दे दो, मैं दे आऊँ । भाँटिनें बरही (पुत्र-जन्म का बारहवाँ दिन) का गीत गाने आई हैं,

तुम्हारी माँ माँग रही हैं ।

[लड़का गुड़ बोरे से निकालकर तराजू पर तौल-तौलकर दूसरे बोरे में डाल रहा है ।]

बाप—[तराजू की डांडी देखकर, मुस्कुराकर] बेटा ! यह गुड़ तो घर जायगा ।

लड़का—पिताजी ! यों तो सारी दूकान हो आपकी है, बोरे का बारा गुड़ उठा ले जाइये । पर तौलकर दूँगा, तो ऐसा ही दूँगा ।

बाप—[हँसकर, मन में] बेटा कमाऊ सपूत है ।

[अजनबी बेटे का जवाब सुनकर मुस्कुराता है]

अजनबी—[मन में] पैसे का लोभ न होता तो बनिये का लड़का उस बहन को इस तरह न ठगता । [बनिये के बाप से] आप से मैं कुछ पूछना चाहता हूँ ।

बाप—[मुड़कर] पूछिये ?

अजनबी—सरकारी बाट को आप नहीं मानते ?

बाप—[हँसकर] बाट ही क्या, हम तो सरकार की किसी चीज को नहीं मानते । बनिये और सरकार की लड़ाई तो हर वक्त चलती ही रहती है ।

अजनबी—कौन जीतता है ?

बाप—बनिया । सरकार कानून बनाकर बनिये का रास्ता रोकती है, पर बनिया तो रास्ता निकाल ही लेता है । सरकार उस रास्ते को भी रोकती है, तो बनिया उससे भी अच्छा रास्ता बना लेता है । सरकार जीत नहीं सकती ।

अजनबी—तब सरकार को क्या करना चाहिये ?

बाप—सरकार को बनिये के काम में हाथ नहीं डालना चाहिये ।

अजनबी—[मन में] पैसों की छीन-झपट है । [प्रकट] मटर के बदले गुड़ बराबर-बराबर क्यों देते हो ? दोनों के भावों में तो अन्तर है ?

बाप—हम तो गाँव वालों की मूर्खता और मजबूरी का लाभ लेते हैं । बराबर देते हैं, क्योंकि वे लेते हैं ।

अजनबी—[मन में] इसी तरह बनिया थोड़े दिनों में सेंट बन जाता है । पैसे तक पहुँचने का कैसा सीधा रास्ता ! कोई रोकटोक नहीं है । बनिये का लड़का तो बाप से भी चालाक है । [अजनबी उठकर जाता है । बनिया भी गुड़ की बोरी उठाकर जाता है ।]

नवाँ दृश्य

समय—रात के नौ बजे ।

स्थान—सिनेमा-घर ।

[सिनेमा-घर खूब सजा हुआ है । मंच पर सिनेमा का परदा है, जिसपर बोलते हुये चलचित्र की छाया पड़ रही है । कभी सुन्दरियों का झुण्ड नाचता-गाता हुआ दिखाई पड़ता है, कभी प्रेमी-प्रेमिका का मिलन, आलिंगन, चुम्बन और कटाक्षपात दिखाई पड़ता है; कभी मिलन और विरह का गाना सुनाई पड़ता है ; कभी पहाड़ी रास्तों पर मोटर का दौड़,

कभी जंगल के रास्तों पर छुड़दौड़, कभी रुदन और कभी कल्लोल की ध्वनि आती है ।

अजनबी सिनेमा-संचालक की बगल में प्रथम श्रेणी के कोच पर बैठा है । संचालक अंग्रेजी ढंग की वेष-भूषा से सुसज्जित है । अजनबी ध्यान से चल-चित्रों को देखता और उसके पात्रों के कथनोपकथन और गाने सुनता है ।]

संचालक—[कनश्चियों से अजनबी को रूप-विभोर देखकर] कहिये,

अजनबीजी ! कैसा दृश्य है !

अजनबी—बहुत सुन्दर । इस देश में ऐसी सुन्दरियाँ हैं, जिनके जोड़ की संसार में शायद ही मिलें ।

संचालक—इनकी कीमत भी बहुत है ।

अजनबी—कितनी ?

संचालक—यह जो आगे नाच और गा रही है, एक लाख पर आर्ड है । बाकी में से कोई पचाम हजार, कोई पचीस हजार और कोई दस हजार पर आर्ड हैं । इससे कम पर कोई नहीं ।

अजनबी—ये सुन्दरियाँ मिलती कैसे हैं ?

संचालक—पैसे से ।

अजनबी—इस फिल्म का क्या नाम है ?

संचालक—समानाधिकार । हमारे देश की स्त्रियाँ भी पुरुषों के बराबर अधिकार चाहने लगी हैं । उसी के दृश्य दिखाये गये हैं । [अजनबी बातें बन्द करके फिल्म देखने लगता है । फिल्म

में एक सुन्दरी चप्पल, पाजामा और लम्बा कोट पहने आती है । सिर पर संवारे हुये बाल हैं, चोटी पीछे लटक रही है, माथे पर लाल बिन्दी लगी

है, आँखों पर चश्मा है । फिल्मी राग में गाती है ।]

सुन्दरी—[गाती है]—

मेरे पिया मिलन को आये ।

मैं बैठी थी मित्र-सभा में पिया खड़े मुँह बाये ॥

मेरे पिया मिलन को आये ॥

[सुन्दरी जाती है । अजनबी हँसता है । उसके बाद कई सुन्दरियों का एक दल आता है, जिनके लम्बी-लम्बी दाढ़ियाँ हैं । हर एक के हाथ में एक कंधी है, जिससे वे दाढ़ी सँवारती चलती हैं । वे एक स्वर से गा रही हैं । अजनबी और प्रायः सभी दर्शक हँसते हैं ।]

सुन्दरियाँ—[गाती हैं]—

दे दो हे प्रियतम प्यारे । हमको अधिकार हमारे ॥

कब तक दाल गलेगी प्यारे ! भूख लगी है गाढ़ी ॥

मैं चूल्हे से दूर रहूँगी, भुलस जायगी दाढ़ी ॥

दे दो अधिकार हमारे ॥

[यह दल 'दे दो अधिकार हमारे' गाता हुआ निकल जाता है । अजनबी मुँह बाये चकित होकर देखता है और हँसता है ।]

अजनबी—यह क्या है ?

संचालक—पुरुषों ने ताना मारा था कि ब्रह्मा ने स्त्रियों का पक्षपात किया और दाढ़ी-मूँछ दोनों पुरुषों को दे दिये । इसपर समानाधिकार चाहने वाली नौजवान लड़कियों ने तैश में आकर उनको जवाब दिया कि दाढ़ी का क्या घमण्ड करते हो ? ब्रह्मा की गलती को हम ठीक कर देंगी । बस, सबने दाढ़ी लगा ली ।

[अजनबी हँसता है ।]

अजनबी—ये पढ़ी-लिखी हैं ?

संचालक—ग्रेजुएट से कम तो कोई नहीं ।

अजनबी—क्या घर पर भी ये ऐसा ही स्वाँग बनाती होंगी ?

संचालक—नहीं, यह तो पैसे का चमत्कार है ।

अजनबी—इनमें सब स्त्रियाँ क्या भले घरों ही की होंती हैं ?

संचालक—नहीं, बेश्यायें भा होती हैं, जो नाम बदलकर काम करती हैं ।

अजनबी—नाम क्यों बदलती हैं ?

संचालक—असली नाम से बहुत से लोग उनको पहचान जायेंगे ।

उनमें कुछ काली होती हैं, कुछ कुरूप होती हैं, किसी के दाँत गंदे होते हैं, किसी के गाल पिचके होते हैं, और कोई ज्यादा उम्र की होती हैं । उनको पहचान लेने पर फिर कोई देखने न आता । पहले जो सुन्दरी गाना गा गई है, वह काले रंग की है और उम्र भी उसकी ढल चुकी है ।

अजनबी—[आश्चर्य से] मगर चित्र में तो सब गोरे रँग की, सुन्दर रूप और चिकने और गुलाबी गालों वाली दिखाई पड़ीं । दाँत तो प्रायः सबके हीरे जैसे चमक रहे थे ।

संचालक—[हँसकर] सिनेमा-घरों में आदमी का हाथ लगते ही बुढ़ियायें जवान बन जाती हैं, पोपले मुँहों में बढ़िया बतीसी-कौंध उठती हैं, काला रंग बिलकुल गोरा हो जाता है, सफेद बाल काले और लहरदार बन जाते हैं, आँखों में कटाक्ष और मुँह में मुसुकान डाल दी जाती है, और पैरों की चाल मन को मोहनेवाली बना दी जाती है ।

अजनबी—इतना आडम्बर क्यों किया जाता है ?

संचालक—पैसे के लिये ।

अजनबी—इसका असर दर्शकों पर क्या पड़ता है ?

संचालक—दर्शकों की काम-वासना जाग उठती है और पैसे उनकी जेबों से निकलकर हमारे पास भाग आते हैं ।

अजनबी—दर्शकों में धनी अधिक होते हैं, या साधारण गृहस्थ ?

संचालक—धनी वगैरे रुपये में दो आना, साधारण गृहस्थ चार आना और मजदूर और छोट्टे धन्धे वाले रुपये में दस आना, यही औसत समझिये ।

अजनबी—मजदूरों के पास इतने पैसे कहाँ बचते होंगे ?

संचालक—कितने मजदूर एक वक्त भूखे रहकर फिल्म देखते हैं ।

घर से दूर, स्त्री के विरह में चूर और मशीनों की घड़-घड़ से मूर्छित मजदूर बेचारे यही शरण पाते हैं । सिनेमा न देखें तो उनका जीना दूभर हो जाय ।

अजनबी—आपके गाने उनकी कामाग्नि में फूँक लगाते हैं, और उस पर आप अपनी रोटी संकतें हैं । यही बात है न ?

संचालक—[हँसकर] हाँ, बात तो ऐसी ही है ।

अजनबी—[मन में] गरीबों को गरीब बनाये रखने का सेठ का सबसे बड़ा पूंजी-शोषक अड्डा यही है । यह तो शराबखाने की तरह है, जहाँ लोग खुद आकर शराब पी जाते हैं । [प्रकट] अच्छा, आपको धन्यवाद है । मैं अब जाऊँगा । [उठता है]

संचालक—धैठिये न ? आगे तो और भी अच्छे गाने और दृश्य आयेंगे । अब तो खेल शुरू हो गया ।

अजनबी—[हँसकर] बस, मुझे लौटकर अपने देश भी तो जाना है।

[दोनों हँसते हैं । अजनबी जाता है ।]

दसवाँ दृश्य

समय—दोपहर के पहले ।

स्थान—सेठ के बँगले का बरामदा ।

[बँगले के पीछे की तरफ एक बरामदे में एक और एक मेज की लंबाई में आमने-सामने दो कुर्सियाँ हैं । एक पर अजनबी बैठा है, दूसरी पर सेठ । मेज पर संगमरमर पत्थर जड़ा है । दूसरे कोने में लोहे के चूल्हों पर रसोइया रोटियाँ सेंक रहा है । उसके पास एक चौकी पर खाने के तैयार पदार्थ अलग-अलग बरतनों में रखे हैं । दो थालों में सब पदार्थ परोस कर रखे हैं । सिर्फ ताजी रोटियाँ रखनी हैं । रसोइया धीरे-धीरे कुछ गा भी रहा है । एक नौकर दो गिलासों में पानी लाकर मेज पर रखता है । वह भी धीरे-धीरे गाने के साथ अलाप लेता है ।]

नौकर—पी-ई-ई-ई जिये सुमधुर सी-ई-ई तल जल । [पीजिये सुमधुर मीतल जल ।]

[अजनबी ध्यान से कान लगाकर सुनता है । नौकर चला जाता है । माली फूलों का गुच्छा लेकर धीरे-धीरे गाता हुआ आता है और गुच्छे को फूलदान में रखकर मेज के बीच में रखता है ।]

माली—[आसावरी राग में गाता हुआ चला जाता है ।]

। सजाये सुन्दर सुन्दर फूल ।

ध आ म ध प म ग रे सा, रे रे म म प आ प ।

अजनबी—[सेठ से] आपके नौकर भी संगीत के अच्छे विशेषज्ञ जान पड़ते हैं।

सेठ—[प्रसन्न होकर] हाँ, मुझे शास्त्रीय संगीत से बड़ा प्रेम है। घर में सदा संगीत का वातावरण बना रहे, इसलिए मैंने सब कामों के लिए चुन-चुनकर ऐसे नौकर रखे हैं, जो तान, लय और आलाप का अच्छा ज्ञान रखते हों। नौकरों को यह भी आज्ञा है कि वे जो काम हाथ में लिये हों, उन्हीं के संबन्ध के गाने बना भी लिया करें।

[अजनबी प्रसन्न होता है। रसोइया गाते-गाते रोटियाँ सेंकता है। आलाप में मस्त रहने के कारण कुछ रोटियाँ जल जाती हैं, जिन्हें वह अलग रखता जाता है। इससे खाने योग्य रोटियाँ सेंकने में देरी हो रही है।]

सेठ—जल्दी करो।

रसोइया—[गा रहा है।]

सा आ आ आग मेरे मालिक को अति भाआवे । x

[साग मेरे मालिक को अति भावै ।]

सा रे ग म ग रे सा, सा रे ग म प म ग रे,

सा रे ग म प ध नी सा नि ध प म ग रे सा ।

अजनबी—[सेठ से] आपका रसोइया तो गायनाचार्य जान पड़ता है ?

x भैरवी या बिलावल

सेठ—[खुश होकर] गायनाचार्य तो है ही । पहले यह गाना सिखाने का धंधा करता था । मैं दूना वेतन देकर इससे रसोइए का काम भी लेता हूँ । खाना भी यह अच्छा बनाता है ।

[रसोइया दोनों थाल लाकर मेज पर दोनों के सामने रख जाता है । थाल लाते समय भी वह गुनगुनाता आता है । वापस जाकर चौकी पर से एक परोसदान उठाता है । जिसमें चार कटोरे एक साथ जड़े हैं, और उन्हें उठाने के लिये एक छड़ पर कड़ी लगी हुई है । एक कटोरे में दाल, एक में रसेदार तरकारी, एक में रायता और एक में खीर भरी हुई है । सबमें एक-एक चम्मच रक्खा है । परोसदान को बायें हाथ में लेकर रसोइया मेज के पास जा खड़ा होता है । अजनबी रसोइया की बाईं ओर पड़ता है ।]

अजनबी—दाल में नमक नहीं है, और खीर कुछ नमकीन मालूम होती है । [सेठ का मुँह देखता है ।]

सेठ—[दाल चखकर] हाँ, मालूम होता है, नमक डालना भूल गया । थाल में अलग रक्खा है, लीजिए ।

अजनबी—[दाल में नमक मिलाते हुये, रसोइया से] क्यों जी ! तुम गाते तो बहुत अच्छा हो, कुछ सुनाते भी रहो ।

रसोइया—बहुत अच्छा, सरकार ! [आलाप लेता है ।]

म प नी ई सा आ आ आ रे ग रे सा

रे ए नी ई सा आ आ

नि ध प म आ आ आ अ म प ध नी

स नी ध ष म ग रे सा । +

[आलाप लेने और अंगों को इधर-उधर हिलाने से परोसदान टेढ़ा

+ काफी राग ।

हो जाता है और दाल, रायता, खीर और रसेदार तरकारी अजनबी के कपड़ों और सिर पर भी उँडेल उठती है। कुछ थाल पर गिरता है और कुछ मेज पर। रसोइये के दाहिने हाथ में चम्मच था, वह सेठ की थाली में गिर पड़ता है। अजनबी उठ खड़ा होता है। सेठ आँखें गुरेर कर रसोइये को देखता है। सेठ नौकर को पुकारता है। वह लोटे में पानी लेकर आता है। रसोइया गाता हुआ परोस-दान को रखने चला जाता है।]

रसोइया—[चलते-चलते गाता है।]

गिर गई दाल गिर गई खीर।

हो गया सरस सबका शरीर।

उठ गया अजनबी कर्मवीर।

तोहें पिया मिलेंगे।

मेज लगाकर बैठ रे ॥ तोहें पिया मिलेंगे० ॥

नौकर—[गाकर] लीजिये, जल हाथ, मुँह, सिर और कपड़े धोइए, ['धोइये' कहते-कहते लोटा हाथ से छूट जाता है, और पानी अजनबी के पैरों पर गिर पड़ता है। नौकर फिर पानी लाने के लिये भागता है।]

अजनबी—[मन में] यह सब कैसे का प्रकोप है। [प्रकट] खाना तो अब खतम कीजिए, और मुझे नहाने के कमरे में पहुँच-वाइये। [सेठ चुपचाप उठता है और एक तरफ को जाता है, अजनबी उसके पीछे जाता है। रसोइया चूल्हे के पास बैठा गारहा है।]

रसोइया—प्रभु जी ! खाओ न दाल अलोनी।

बैगन के भरते में शकर कौन बात अनहोनी ॥ प्रभुजी० ॥

दूसरा अङ्क

पहला दृश्य

समय—प्रातःकाल आठ बजे ।

स्थान—मजदूर-नेता का घर ।

[घर सामने को ओर पक्का है ओर पीछे की ओर कच्चा । बरामदे में फूलों के गमले रखे हैं । घर के सामने छोटा-सा अहाता है, जिसमें एक ओर पक्का कुर्वाँ है; उसके पास ही तरकारियों की क्यारियाँ हैं । एक क्यारी में फूल भी लगे हैं । अहाते के एक कोने में अशोक का छायादार पेड़ है । उसके नीचे एक आराम-कुर्सी पर नेता बैठा है । सामने एक छोटी मेज रखी है । जिस पर हजामत का सामान और चश्मा रखा है । वगल में एक आराम-कुर्सी पर अजनबी बैठा है ।

नेता की उम्र ३०—३५ के लगभग; पोशाक—धोती, कुरता और चप्पल । शरीर का रंग गेहुँवा, नाक नोकदार और लम्बी, सिर पर सँवारे हुए बड़े-बड़े बाल, चेहरा भरा हुआ, शरीर सुगठित ।]

नेता—[दाढ़ी में साबुन लगाते हुए] कहिए अजनबीजी ! आपने

मिल-मजदूरों की हालत भी देखी ?

अजनबी—देखी तो कम, पर सुनी अधिक है ।

नेता—मजदूरों का रक्त निचोड़कर मिलवाले सेठ बन जाते हैं।

अजनबी—और मजदूर अगर मिल के मालिक बन जायँ, तो वे भी इसी तरह रक्त निचोड़ने लगेंगे।

नेता—यह तो रास्ता ही ऐसा है। इसीसे तो मैं किसी को सेठ बनने देना नहीं चाहता।

[सेठ के मुनीम का प्रवेश। पोशाक—धोती, कुरता, पगड़ी, दुपट्टा। पैर में देशी जूता। उम्र ५० के लगभग। तोंद निकली हुई। चेहरा भरा हुआ। दाढ़ी साफ, मोँछ बड़ी-बड़ी।]

नेता—[हँसकर मुनीम से] कहो जी ! कहाँ चले ?

मुनीम—आप [अजनबी की ओर देखकर] इन से बात कर लें, तब कहूँ।

नेता—ये विदेशी हैं; इनके सामने बात करने में कोई हर्ज नहीं।

मुनीम—[नोटों का एक बंडल मेज पर रखकर] सेठ ने एक हजार के नोट भेजे हैं, और हाथ जोड़कर कहा है कि अब आप अपना आन्दोलन बन्द करें।

नेता—[नोटों को गिनकर] अब रास्ते पर आए न ? लेकिन अब तो बात बहुत आगे बढ़ गई है। खैर; मैं सँभाल लूँगा।

[मुनीम प्रणाम करके जाता है। नोटों को जेब में रखकर नेता हज़ा मत बनाने लगता है।]

अजनबी—आन्दोलन बंद कर देने से क्या मजदूरों का दुःख भी मिट जायगा ?

नेता—[हँसकर] मजदूर दुःख में ऐसे पग गए हैं कि वे दुःख को दुःख समझते ही नहीं। कुछ बोनस दिला दूँगा, वे संतुष्ट हो

जायेंगे । [धीरे-धीरे गाता है ।]

हमने यह अनुभव कर देखा जग में दुख ही दुख है ।

दुख को भी सुख समझ रहे हैं, बस इतना ही सुख है ॥

अजनबी—[मुस्कराकर] पर उनके दुःख का आपन अच्छा दाम लिया !

नेता—[हँसकर] यह तो बुद्धि की कमाई है । सेठ मजदूरों को दुहता है, मैं सेठ को दुहता हूँ । मूर्ख बुद्धिमान के भक्ष्य हैं । [हँसता है । हजामत का सामान समेटते हुये] एक पबलिक-सर्विस तो खतम हुई ।

अजनबी—[आश्चर्य से] पबलिक-सर्विस कौन-सी ?

नेता—आपने नहीं देखा, मैंने अभी दाढ़ी के बाल साफ किए हैं ।

अजनबी—यह भी पबलिक-सर्विस है ?

नेता—क्यों नहीं ? इन वालों का वजन क्या इतना ज्यादा था कि मैं उठा ही नहीं सकता था ? एक ही दो रत्ती तो होगा । मैं खुद अपना मुँह देख भी नहीं सकता । दूसरे ही तो देखेंगे । देखकर उनको प्रसन्नता होगी । क्या यह पबलिक-सर्विस नहीं है ?

अजनबी—[खिलखिलाकर] आपको बातें तो बड़ी रोचक हैं ।

[नौकर तौलिया और लोटे में पानी लाता है । नेता हाथ मुँह धोता और पोंछता है । नौकर हजामत का सामान समेटकर ले जाता है ।]

नेता—[कुर्सी पर जमकर बैठकर] नहाता-धोता हूँ, यह भी पबलिक-सर्विस ही है । मैले कपड़े पहनूँ या नंगा ही रहूँ, तो मेरा कोई क्या कर सकता है ? जनता की आँखों और मन

को स्वच्छता और सुन्दरता से प्रफुल्लित करने के लिए ही तो साफ धुले हुए, इखी किए हुए, चमकीले और विचित्र काँट-छाँट के कपड़ों की तहें शरीर पर लादे फिरता हूँ ।

अजनबी—[मुसकुराकर] सचमूच आप तो बड़े प्रभावशाली वक्ता होंगे ।

[तीन मजदूरों का प्रवेश । पोशाक, आधी बाँह का कुरता, मैली धोती और एक के निर पर अँगौछे की पगड़ी और दो के कन्धों पर अँगौछे । उम्र क्रमशः २५, ३५ और ४० । तीनों आकर नेता के सामने खड़े हो जाते हैं ।]

नेता—क्यों क्या हाल है ?

एक मजदूर—सब ठीक है । सेठ बहुत परेशान है । सेठ का मुनीम इधर आया तो था ।

नेता—हाँ, मुझे रूपों का लालच दिखाने आया था, मैंने साफ-साफ इन्कार कर दिया । मैंने कह दिया कि मजदूरों की माँगें पूरी हुए बिना मैं सेठ का पान भी नहीं खा सकता ।
(मजदूर खुश होते हैं ।)

अजनबी—[मन में] हे भगवान ! पैसा और सत्य एक स्थान में बिल्कुल नहीं रह सकते ?

नेता—[मजदूरों को सुनाते हुये अजनबी से] हाँ, तो [मुँह में वेसलिन लगाते हुये] देखिये, वेसलिन लगा रहा हूँ; बवासीर की बीमारी है; रात में खाँसी आती है; डाक्टर गधे ने कह दिया है कि क्षय रोग की शुरुआत है । कब्जियत रहती है, सिर में दर्द रहता है । इन रोगों की गोलियाँ बनाने और शीशियाँ

तैयार करने में हजारों मजदूर तो लगे होंगे ? मेरी गाढ़ी कमाई का कुछ न कुछ पैसा उनके पेट में तो जाता ही होगा ? मैं रोगी बनकर भी संतुष्ट रहता हूँ । रोगी होना भी एक “पब्लिक-सर्विस” ही है । [मजदूर खुश होते हैं ।]

अजनबी—[खिलखिलाकर] आप तो बड़ा परोपकारी जीवन बिता रहे हैं ।

[नौकर जलपान, और लाल दवा की एक बोतल और शीशे का गिलास लेकर आता है और नेता के सामने मेज पर रख देता है ।

नेता—[मजदूरों से] अच्छा, तुम लोग जाओ; मैं अभी उसी तरफ आता हूँ । [मजदूर जाते हैं ।

नेता—[अजनबी से] आप भी जलपान कीजिये ।

अजनबी—कुछ खाने-पीने की मेरी इच्छा बिल्कुल नहीं है । क्षमा कीजिए ।

[नेता जलपान करता है । फिर लाल दवा की गिलास में ढालकर अजनबी की ओर बढ़ाता है ।]

नेता—इसे तो लीजिए ?

अजनबी—यह क्या है ?

नेता—(आँखें चमकाकर) यह अमृत है । देवता पहले पीते थे, अब उन्होंने मनुष्य-जाति को दान कर दिया है । पेट में पहुँचते ही यह बुद्धि के सारे दरवाजे खोल देता है । हृदय में उमंग भर देता है, और भय और भीरुता को दूर भगा देता है । मजदूरों के कल्याण की बातें इसी में नहा-धोकर सजीव बनकर बाहर आती हैं, तभी उनकी कदर होती है । लीजिए तो ?

अजनबी—(हाथ जोड़कर) दवा लेने की मेरी आदत नहीं है;
 क्षमा कीजिए ।

[नेता लाल दवा पीता है । नौकर जलपान के बर्तन, बातल और गिलास उठा ले जाता है, और पान का टिप्पा लाकर मेज पर रख जाता है ।]

नेता—इस देश की शिक्षा का यह एक आवश्यक अङ्ग है । दिन भर और कभी कभी तो रात के बारह बजे तक बिना खाए-पिए इधर-उधर दौड़ना पड़ता है । मूर्खों को समझाना पड़ता है । इमका सहारा न लूँ, तो शरीर दो ही दिन में किनारे लग जाय । [आकाश की ओर दृष्टि करके] हे ईश्वर ! संसार में जितने रोग हैं, सब इस शरीर में भर दो, ताकि दवाइयाँ तैयार करने में निस्सहाय और गरीब मजदूरों को मेरे शरीर से भी तो कुछ मिलता रहे । [आग्यें मूँद लेता है ।]

अजनबी—[मन में] ऐसा नाटक तो और कहीं देखने को नहीं मिला था । ईश्वर ने मनुष्य को नंग-धड़ंग बनाया, पैसे ने मनुष्य को बहुरूपिया बना दिया । [मुसकुराता है ।] पता नहीं चलता, मजदूरों का असली शुभचिन्तक कौन है ? यह नेता तो सेठों का राहु है । इस देश में एक के पीछे एक भूत लगा हुआ है । [प्रकट] आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई । अब आज्ञा चाहता हूँ ।

[अजनबी उठ खड़ा होता है । नेता भी उठता है । दोनों एक दूसरे को हाथ जोड़कर अलग होते हैं । नेता घर के अंदर चला जाता है ।]

दूसरा दृश्य

स्थान—गाँव का स्कूल ।

समय—दोपहर के पहले ।

[मिट्टी की दीवारों से घिरा और खपरैल से ढका हुआ एक लम्बा दालान, जिसमें एक ओर तीन दरवाजे और दूसरी ओर चार खड़कियाँ हैं । दालान के सामने नाम का पेड़ और कच्चा कुवाँ है ।

नाम के पेड़ के नीचे पाँच से लेकर दस वर्ष तक की उम्र के कुछ लड़के जमीन पर बिछे हुए टाट की लम्बी पट्टियों पर दो पंक्तियों में बैठे हुए पढ़ रहे हैं । लड़कों को पोशाक ज्यादातर धोता, कुरता और किसी की जाँघिया और आधी बाँह का कुरता है । कुछ सिर्फ धोती पहने हैं । कपड़े प्रायः सब के गन्दे हैं ।

शिक्षक की उम्र तीस के लगभग; शरीर दुबला-पतला, पोशाक धोती कुरता और पैरों में खड़ाऊँ । सिर खुला हुआ । शिक्षक के लिए पंक्ति के एक सिरे पर एक कुर्सी रखी है । शिक्षक दोनों पंक्तियों के बीच में टहलता हुआ देख रहा है । पाँच छः वर्ष के एक लड़के को शिक्षक उठने का आदेश करता है । वह हाथ में हिन्दी का प्राइमर लेकर खड़ा हो जाता है । शिक्षक उस पढ़ने का इशारा करता है । अजनबी का प्रवेश । वह आकर शिक्षक से कुछ दूरी पर खड़ा हो जाता है ।]

शिक्षक—[अजनबी से] कहिये, आप कौन हैं ? क्यों खड़े हैं ?

अजनबी—मैं एक दूसरे देश का रहने वाला हूँ । आपका देश देखने आया हूँ । इधर से जा रहा था, लड़कों को पढ़ते देख कर लौट पड़ा हूँ । आप पढ़ाइये, देखकर मैं चला जाऊँगा ।

शिक्षक—[लड़के से] पढ़ो ।

लड़का—[पुस्तक पर आँख गड़ाकर] भु ऊ ऊ ठ म त बो लो ।

शिक्षक—भूठ किसे कहते हैं ?

लड़का—नहीं जानता ।

[शिक्षक भूठ बोलने के कई उदाहरण देकर समझाता है ।]

अजनबी—(शिक्षक से हँसकर) लड़का अभी तक नहीं जानता कि

भूठ कैसे बोला जाता है; आप ही उसे सिखा रहे हैं । [शिक्षक

अजनबी का तर्क उचित समझकर कुछ विचार में पड़ जाता है ।]

शिक्षक—जैसा पुस्तक में लिखा गया, मैं तो वैसा ही पढ़ाता हूँ ।

अजनबी—सीधे तौर पर क्यों नहीं लिखा गया कि “सच बोलो” ?

जान पड़ता है किसी की मंशा शिक्षक-द्वारा लड़कों को भूठ

बोलना सिखला देने की है ।

शिक्षक—(लड़के से) अच्छा, आगे पढ़ो ।

लड़का—(पुस्तक पर आँख गड़ाकर) चो री म त क रो ।

अजनबी—(लड़के से) चोरी करना जानते हो ?

लड़का—नहीं ।

[शिक्षक चोरी के कुछ उदाहरण देकर समझाता है ।]

अजनबी—(हँसकर) आपने लड़के को भूठ बोलना सिखाया; अब

चोरी करना सिखा रहे हैं ।

शिक्षक—(कुछ झेंपकर) आप सच कहते हैं, पर जो पुस्तक शिक्षा-

विभाग से मंजूर है, वही पढ़ानी पड़ती है ।

अजनबी—ठीक है, आप तो कर ही क्या सकते हैं ? जहर तो

“मत करो” ‘मत करो’ में है। सीधे कहते कि “अपना

कमाई खाओ” तो आप अपनी कमाई से ऊँचे उठे हुए लोगों के उदाहरण देकर समझाते । (लड़के से) अच्छा कोई कहानी भी जानते हो तो सुनाओ ।

लड़का—एक मकड़ी थी । वह शिकार की ताक में जाला तानकर बैठकर गई । एक मकखी उधर से जा रही थी । मकड़ी ने कहा—मकखी बहन ! थक गई होगी, सुस्ता लो न ? तुम्हारे चमकीले पर तो बड़े ही सुन्दर हैं । जरा मुझे भी दिखलाती जाओ । मकखी अपनी बड़ाई सुनकर बहुत खुश हुई और जाले पर बैठ गई । मकड़ी ने उसे पकड़कर खा लिया ।

अजनबी—तुम मकड़ी बनना पसन्द करोगे या मकखी ?

लड़का—मकखी तो मूर्ख थी । मकखी बनना कोई भी पसन्द नहीं करेगा ।

अजनबी—[शिक्षक से] तब लड़कों को मकड़ी की तरह चालाक बनने की शिक्षा भी दी जा रही है । कहानियों से भी ज़हर अन्दर डाला जा रहा है । [शिक्षक चकित होकर अजनबी का मुँह देखता है ।] अच्छा, अब पढ़ाइये । नमस्कार । [मन में] [इन्हीं में से सेठ, डाक्टर, वकील, महंत, और नेता पैदा होंगे । यही उनकी नींव दी जा रही है ।]

[अजनबी जाता है । शिक्षक बड़े कौतूहल से उसकी ओर देखता है ।]



तीसरा दृश्य

स्थान—दोपहर के पहले ।

समय—ग्रेजुएट का कमरा ।

[गाँव के बाहर एक पक्का मकान है । मकान के सामने नीम का एक छायादार पेड़ है । मकान का एक कमरा सजा हुआ है । उसमें २२-२३ वर्ष का एक युवक एक मेज के पास कुर्सी पर बैठा है । सामने एक खाली कुर्सी रखी है । युवक पतलून, आधी बाँह की कमीज, भोज़ा और बूट पहने है । सिर के बाल मँवारे हुये हैं । मेज पर लिखने-पढ़ने की जरूरी चीजें सजाकर रखी हैं । कमरे के दरवाजे से अजनबी का प्रवेश ।]

युवक—[आवेश के साथ] कौन हो तुम ? बिना पूछे अन्दर क्यों आ गए ? जंगली हो क्या ?

अजनबी—[नम्रता से] बाहर कोई नहीं था; खिड़की में आपको अकेला बैठा देखकर बिना पूछे अन्दर आ गया हूँ, क्षमा माँगता हूँ । और आपका यह अनुमान सही है कि मैं जंगली हूँ । आपका देश देखने आया हूँ ।

युवक—[उपेक्षा पूर्वक] क्या नाम है तुम्हारा ?

अजनबी—मेरा नाम अजनबी है ।

युवक—[नम्र होकर, हँसकर] आप अजनबी जी हैं ? आइये ! आइये ! बैठिये, आपको देखने की तो बड़ा उत्सुकता थी । [खाली कुर्सी की ओर इशारा करता है ।]

अजनबी—[कुर्सी पर बैठकर] आपको मेरा नाम पहले से कैसे मालूम था ?

युवक—सभ्य जगत् का यही तो चमत्कार है। कलब से जिस दिन आप चले हैं, तब से परसों तक आप जहाँ-जहाँ गये हैं, जो-जो बातें की हैं, सबके समाचार दैनिक पत्रों में रोज छपते रहे हैं। मैं आपका नाम, धाम और काम सब जानता हूँ। कल का समाचार आज की डाक में आता होगा। हमलोग विचार-धारा की ऊपरी सतह पर रहते हैं। वर्तमान जगत् का कोई भी महत्वपूर्ण विषय छिड़ने पर जो आदमी बातों के केन्द्र से दूर रहता है, हमलोग उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। इससे प्रातःकाल उठते ही हमारा सबसे पहला काम अखबार पढ़ लेना होता है।

अजनबी—[आश्चर्य से, मन में] इसे तो अपनी सभ्यता का पूरा अभिमान है। [प्रकट] मेरी सारी बातें रोज छप जाया करती हैं ?

युवक—हाँ, सारी बातें। आप यहाँ गये, यह बक दिया; वहाँ गए, वह हाँक दिया; उनसे हम लोगों को पता चल गया है कि हमारी सभ्यता के बारे में आपकी क्या राय होगी। और यह भी मालूम हो गया है कि आप ऊपर ही ऊपर तैर रहे हैं, सभ्य समाज क्या है, और उसकी सभ्यता क्या है, इसका आपको पता लग भी नहीं सकता।

अजनबी—[मन में मुसकुराकर] युवक ने तो सभ्य-समाज का सारा बोझ अपने ऊपर ले रक्खा-सा जान पड़ता है। पर सभ्य-समाज इसका कितना बोझ सँभालता है ? [प्रकट] पर मैं तो सत्य ही बोलूँगा, वह सही भी हो सकता है, गलत

भी । जो सत्य होगा, वह तो आप ही सूर्य की तरह चमक उठेगा । अन्धकार को तो कहना ही नहीं पड़ेगा कि वह हट जाय ।

युवक—सभ्य-समाज सूर्य को उतना ही चमकने देता है, जितने से आँखें चौंधिया न जायँ ।

अजनबी—[मन में] सभ्य-समाज का यह पुर्जा तो ठीक ढला हुआ जान पड़ता है । [प्रकट] आप तो थ्रेजुएट हैं ?

युवक—हाँ ।

अजनबी—उम्र क्या है ?

युवक—तेईसवाँ चल रहा है ।

अजनबी—विवाह हुआ है ?

युवक—नहीं ।

अजनबी—क्यों इस देश में तो जल्दी ही विवाह करने की प्रथा है ।

युवक—उसी कुप्रथा को मिटाना है । जब स्वावलम्बी हो जाऊँगा, तब विवाह करूँगा ।

अजनबी—आपके माता-पिता कुछ दवाव नहीं डालते ?

युवक—मेरे व्यक्तिगत मामले में उनको दखल देने का अधिकार ही क्या है ?

अजनबी—क्यों ? उन्होंने आपको जन्म दिया, पाला-पोसा, पेट काट कर ऐसी खर्चीली शिक्षा दिलाई, आप पर उनका कुछ भी अधिकार नहीं ?

युवक—उन्होंने मुझ से पूछकर जन्म तो दिया नहीं । पालना-

पोसना उनका स्वभाव ही है, पढ़ाया-लिखाया स्वार्थवश । मैं क्या कर सकता हूँ ? मैंने उनसे कोई वादा तो किया नहीं ।
अजनबी—[मन में कुछ खिन्नता अनुभव करते हुए] घर में कितनी ग्वेती होती है ?

युवक—पिताजी बता सकेंगे; मुझे बिल्कुल मालूम नहीं ।

अजनबी—[हँसकर] मेरा नाम, धाम और काम, सब तो मालूम है, पर अपने घर की जीविका क्या है, यह मालूम नहीं ?

युवक—ग्रेजुएट का यह काम नहीं ।

अजनबी—स्वावलंबी आप कब वनेंगे ?

युवक—जब डेढ़-दो सौ मासिक वेतन पाने लगूँगा, तब ।

अजनबी—यह कब मिलेगा ?

युवक—[लाचारी प्रकट करने के स्वर में] कह नहीं सकता । दो वर्ष से नौकरी की तलाश कर रहा हूँ । ग्रेजुएट इतने भर गए हैं कि पच्चीस-तीस रुपये की नौकरी के लिए भी भीड़ लग जाती है ।

अजनबी—फिर आपको डेढ़-दो सौ की नौकरी कैसे मिलेगी ?

युवक—[सिर को उँगली से छूकर] भाग्य में जैसा होगा, वैसा होगा ।

अजनबी—संभव है, डेढ़-दो सौ पहुँचने तक दस बीस वर्ष लग जायँ, तब तक ब्रह्मचर्य से रहना तो बड़ी कठिन तपस्या है ।

युवक—[हँसकर] ब्रह्मचर्य मूर्खों का सिद्धान्त है । पाखाना, पेशाब करना, खुजलाना, छींकना, डकारना, और जँभाई लेना जैसे शरीर की स्वाभाविक जरूरतें हैं, वैसा ब्रह्मचर्य से रहना

और न रहना भी है। सभ्य-समाज में किसी को कष्ट पहुँचाये बिना शरीर की जरूरतों को पूरा कर लेना अपराध नहीं गिना जाता।

अजनबी—[मन में] युवक तो सभ्य-समाज की तह पर तह खोल रहा है। [प्रकट] क्या डेढ़-दो सौ रुपए माहवारी से कम में खर्च नहीं चल सकता ?

युवक—नहीं; सभ्य कहलाने के लिये इतनी चीजों की जरूरत होती है, सुनिये—

पोशाक—एक दर्जन मोजे, दो जोड़े कीते, आफिस घर, टेनिस और टहलने के लिए कम से कम चार जोड़ी जूते, आधे दर्जन पतलून, आधे दर्जन पाजामे, जूतों के लिए आधे दर्जन पालिश और ब्रुश, एक दर्जन कमीजें और कुरते, आधे दर्जन बनियाइनें, तीन वास्कट, आधे दर्जन रेशमी और ऊनी कोट, आधे दर्जन टाइयाँ, एक दर्जन कालरें, कंधियाँ, शीशे, जाड़े के लिए एक ओवरकोट, बरसात के लिये एक बरसाती, तीन जोड़ी धोतियाँ, तीन जोड़ी जाँघिया, घड़ी, चेन, छड़ी, छाता, चरमा, फाउन्टेनपेन, सिगरेट का डब्बा, सिगरेट की राख भाड़ने का पात्र, कोट और कमीज की बटनें। इनमें से बहुतसी चीजें तो एक ही साल के लिए हैं, और कुछ कई सालों के लिये। अब कमरे की सजावट का सामान सुनिए—दरी, कालीन, गद्देदार, कुर्सियों का एक सेट, चार तिपाइयाँ, छोटी-बड़ी दो मेजें, एक दर्जन बेंत की कुर्सियाँ, दरवाजों और खिड़कियों के परदे, चिक, कम से कम आधे दर्जन

चित्र, दो फूलदान, आधे दर्जन मेजपोश, तीन चार क्रिस्मों के चाय के सेट, तीन चार ट्रे, कलमदान, फाउन्टेनपेन की स्याही, कसरत करने की मशीनें, कपड़े टाँगने की दो अलमारियाँ, किताबें रखने की चार अलमारियाँ, दो लालटेनें, दो लैम्प और नेवाड़ के दो पलंग । कम से कम इतनी चीजें हों, तो काम चल सकता है ।

अजनबी—इतना लम्बा खर्च न करें तो ?

युवक—तो न सभ्य-समाज में बैठने को जगह पायेंगे, न बड़े वेतन की कोई नौकरी ।

अजनबी—[आश्चर्यपूर्वक मन में] सभ्य-समाज इस नौजवान लड़के के सिर पर जादू की तरह सवार है । क्या अद्भुत माया है ! इस देश के समाज का एक छोटा-सा दल संगठित होकर बहुत बड़ी संख्या से अपने सुखों को निचोड़ने और उसे सदा गरीब और सदा मूर्ख बनाये रखने में जी-जान से लगा है । यह नौजवान लड़का भी उसी दल में जा मिलने को आतुर हो रहा है, पर अभी जगह नहीं मिल रही है । [प्रकट] इस शिक्षा का फल क्या यह न होगा कि मनुष्य पर चिन्ताओं का भार अधिक बढ़ जायगा ?

युवक—तभी तो मनुष्य अपनी बेकार पड़ी हुई शक्तियों को बाहर निकालेगा ।

अजनबी—[हँसकर, मन में] यह रोग की दवा भी जानता है ।
[प्रकट] क्या यह उचित होगा कि पढ़ लिख कर आदमी मूर्खों की कमाई खाकर जीवन बिताये ?

युवक—जो जिस काम के योग्य होगा, वह वही काम करेगा । गधे पर बोझ ही लादा जायगा, वह हाथी पर चढ़कर नहीं चलने पायेगा ।

अजनबी—आप भी खेती क्यों नहीं करते ?

युवक—आजकल की खेती वैज्ञानिक तरीके पर किये बिना परिश्रम व्यर्थ जाता है ।

अजनबी—[मन में] इधर खाई, उधर कुँवा । [प्रकट] वैज्ञानिक तरीके ही पर कीजिये ।

युवक—उसके लिए मशीनें, काफी रुपया चाहिए [कमरे के भीतर वाले एक दरवाजे से युवक के पिता का प्रवेश । पोशाक-धोती और कंधे पर अँगोछा, बाकी शरीर खुला हुआ, उम्र ५० से अधिक ।]

युवक—[अजनबी से] ये मेरे पिता हैं । [पिता से] ये अजनबी जी हैं । [अजनबी उठ खड़ा होता है, और दोनों एक दूसरे को प्रणाम करते हैं ।]

पिता—[अजनबी से] बैठिए, आपको देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई । मैं आपके लिए कुछ जलपान लाऊँ ।

[अजनबी का उत्तर लिए बिना ही युवक का पिता जिस दरवाजे से आया था, उसी से वापस जाता है, और थोड़ी देर बाद ही एक तश्तरी में दो पेड़े और दो समोसे, और एक गिलास में गानी लेकर वापस आता है और अजनबी के सामने मेज पर रख देता है ।]

अजनबी—[आँखों में आँसू भरकर] आपको देखकर मुझे मेरे पिता याद आ रहे हैं ।

पिता—आय हमारे देश भर के अतिथि हैं, हमारे देवता हैं । आपने

बड़ी कृपा करके मेरे घर को सम्मानित किया। मैं पत्रों में आपका समाचार पढ़ता रहा हूँ। आपके दर्शनों की मेरी बड़ी उत्कण्ठा थी। [अजनबी की आंखें डबडबा आती हैं। युवक का पिता कमरे के कोने से एक कुरसी उठा लाकर अजनबी के पास बैठ जाता है। युवक बैठा ही रहता है। अजनबी संकोच-पूर्वक एक पेड़ा और एक समोसा खाकर पानी पीता है। युवक उठकर बाहर जाता है]

अजनबी—मैंने भी सुना था कि गाँव में आपका लड़का ग्रेजुएट है। गाँव के ग्रेजुएट का जीवन कैसा होता है, यह देखने चला आया। आपके दर्शन करके मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। [कुछ टहरकर]

अब आप अपने लड़के का विवाह कर दीजिए।

पिता—[कुछ हँसकर] वह सिनेमा की लड़कियों जैसे रूप रँग वाली और अपने बराबर पढ़ी-लिखी लड़की चाहता है। हमारे किसान-वर्ग में पहले तो उसका मिलना ही कठिन है; दूसरे गाँव का देहाती जीवन उसे पसंद कैसे आयेगा?

अजनबी—वह काम में लग जायगा, तो बाहर रहने लगेगा।

पिता—काम भी तो मिले! अर्जियाँ लिए दौड़ता तो रहता है। मेरे साथ काम करना वह पसंद नहीं करता; मनस्विता इतनी है कि घर में बैठे-बैठे पिता की कमाई खाने को भी राजी नहीं। शिक्का दिलाकर मैंने तो अपनी टाँग ही तोड़ ली। [हँसता है।]

अजनबी—शिक्का का प्रभाव लड़कियों पर भी तो पड़ा होगा?

पिता—लड़कों से अधिक। कई घरों में पढ़ी-लिखी लड़कियाँ गई हैं। दिन भर तितली-ऐसी बनी बैठी रहती हैं; न काम करती हैं, न बूत; न सास-ससुर का अदब रखती हैं, न जेठ और

देवर का लिहाज । पति चाहे कमाता हो, चाहे बेकार बैठे हो, पर वह तो ससुर का धन दोनों हाथों से उलीच कर बाजार में फेंकने लगती है । वर्तमान शिक्षा हमारे लिए बहुत महँगी पड़ रही है । [विनय-पूर्वक] भोजन का समय हो रहा है, आप चलकर भोजन कर लीजिए ।

अजनबी—[नम्रता-पूर्वक] मैं क्षमा चाहता हूँ, मैं एक ही बार रात में भोजन करता हूँ । [मन में] यह शिक्षा तो मानों सेठ की मिल और फैक्ट्रियाँ चलाने और खासकर बनिया-वर्ग को धनी बनाने के लिए ही दी जाती है । आश्चर्य है, विश्वविद्यालय भी गरीबों के लिए पूँजी-शोषक तैयार करने में लगे हैं । सचमुच सेठ के चंगुल से कोई बाहर नहीं जा सकता ।

[कमरे के अन्दर के दरवाजे से युवक का प्रवेश ।]

युवक—[पिता से] भोजन तैयार है । आप और अजनबीजी जाइये ।

पिता—अजनबी जी भोजन नहीं करेंगे; मुझे भी अभी देर लगेगी: तुम कर लो ।

युवक—मैंने कर लिया है । [युवक कमरे के बाहर जाता है ।]

अजनबी—[मन में] पुरानी और नई सभ्यता में कितना अन्तर है । सभ्य पुत्र ने पिता और अतिथि के पहले ही भोजन कर लिया । [प्रकट] वर्तमान शिक्षा से आपके देश की उत्पादन शक्ति पर भी प्रभाव पड़ता होगा ?

पिता—जरूर पड़ता है । हर साल लाखों युवक उत्पादकों की श्रेणी से अलग हुए जा रहे हैं; इसी औसत से उत्पादन भी घट

रहा है।

अजनबी—इतना ही नहीं, घटे हुए उत्पादन पर वे स्वयं लड़ भी जाते हैं, इससे वह और भी घट जाता है। बदले में वे अपनी नौकरी से पाये हुए जो रुपये देते हैं, वह तो खाये नहीं जा सकते; वह तो आते हैं, और फिर बाजार में लौट जाते हैं। एक दिन ऐसा भी हो सकता है कि देश में शिक्षित लोग ही भोजन और वस्त्र का अकाल पैदा कर देंगे।

पिता—यह तो निश्चित ही है।

अजनबी—आश्चर्य है कि शिक्षा युवकों को घर और गाँव से निकालकर आफिस में बैठा देती है, आप के नेता शिक्षा के इस दुष्परिणाम को नहीं देख रहे हैं।

[दोनों क्षण भर के लिए विचार-मग्न हो जाते हैं।]

अजनबी—[उठकर] अब तो मैं आपसे आज्ञा चाहता हूँ। आप के पुत्र से और आपसे मिलकर मुझे बहुत-सी बातों का ज्ञान हुआ है, इसके लिए बहुत कृतज्ञ हूँ।

[युवक के पिता को प्रणाम करके अजनबी जाता है। दरवाजे तक पहुँचाकर पिता भी वापस जाता है।]

चौथा दृश्य

समय—दिन के ग्यारह बजे ।

स्थान—सम्पादक का कमरा ।

[कमरे की दीवारों से लगकर अलमारियाँ और रैक रक्खे हैं, जिनमें पत्रों की फाइलें और पुस्तकें रक्खी हैं । कमरे के एक भाग में सम्पादक की मेज है; जिसपर लिखने का सब सामान और प्रूफ रक्खे हैं । सम्पादक कुर्सी पर बैठा है, उसके सामने दूसरी कुर्सी पर अजनबी बैठा है ।]

सम्पादक—समाचार-पत्र और उसकी जरूरत से तो आप परिचित हो ही गये होंगे ?

अजनबी—सिर्फ जरूरत समझ में नहीं आई । मुझे तो अभी तक गाँजा, भाँग और शराब की तरह समाचार-पत्र भी नशे की एक चीज ही जान पड़े । मनुष्य-समाज में क्या-क्या अपराध हो रहे हैं, और कहाँ उसकी कितनी हानि हो रही है, इन्हीं बातों के समाचार चुन-चुनकर उनमें छापे जाते हैं ।

सम्पादक—आप उन्हीं को पढ़ते होंगे ?

अजनबी—पढ़ता तो मैं सब हूँ, पर मुझे कोई पन्ना ऐसा नहीं मिलता, जिस पर कहीं रेल लड़ने की, कहीं जहाज डूबने की, कहीं हवाई जहाज में आग लगने की, कहीं तूफान आने, ओले पड़ने और बाढ़ आने की, कहीं दंगा होने की और इन सब में हजारों आदमियों के मर जाने की खबर न छपती हो । किसी को कुत्ते ने काट खाया, कोई पेड़ पर से

गिर पड़ा और उसकी टाँग टूट गई और किसी को भेड़िया उठा ले गया, ये खबरें भी छापी जाती हैं। यद्यपि पढ़ने वाले किसी को मदद नहीं पहुँचा सकते। मानों समाचार-पत्रों के पाठक यमराज के नाती हैं। उनको उड़े सबेरे ही, बिछौने से उठते ही, यह खबर बता दी जाती है कि कल तुम्हारे नाना ने दुनिया में यह-यह उत्पात किया।

[सम्पादक जोर से ठहाका मारकर हँसता है।]

सम्पादक—[गम्भीर होकर] पाठकों की रुचियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। सबको कुछ न कुछ आहार देना पड़ता है।

अजनबी—[अपनी ही धुन में] एक तो आपके देश की शिक्षा ने घर-घर में यों ही सैकड़ों नई चिन्तायें विदेश से मँगा-मँगा कर भर दी हैं, दूसरे, आप संसार भर की अनगिनत चिन्तायें लादे हुये बड़े सबेरे ही घर में घुस पड़ते हैं। इससे आदमी चिन्ताओं का धक्का खाता हुआ कुण्ड बन जाता है।

सम्पादक—[गम्भीरता से] आप उन लेखों और समाचारों को पढ़िये, जिनमें बुराईयों के बुरे नतीजे बताकर पाठकों को सदाचार के रास्ते पर चलने को उत्साहित किया जाता है।

अजनबी—उन्हें भी पढ़ता हूँ। एक पृष्ठ पर ब्रह्मचर्य पर लेख होता है, उसी के सामने तिलाओं और गर्भनिरोध की थैलियों का विज्ञापन। पाठक बेचारा किधर जाय !

सम्पादक—विज्ञापन न लिये जायँ तो पत्र चल ही नहीं सकता। पैसा लगानेवाले को अपने रुपयों का सूद भी तो मिलना चाहिये।

अजनबी—तो सदाचार का दावा तो गलत ही है। पैसा कमाने के लिये समाचार-पत्र निकाले जाते हैं, ऐसा कहिये। मैंने सुना है कि राष्ट्रीयों में विष का बीज भी पत्रों ही से बोया जाता है। सम्पादक—पत्र जन-तन्त्र-शासन-प्रणाली का मुख्य अंग है। पार्टियों में एक-सी विचार-धारा कायम रखने के लिये पत्र से बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं।

अजनबी—मेरा तो अनुमान है कि पत्रों से उनके पाठकों की खुद सोचने-विचारने की ताकत मारी जाती है। वे विचार तो पचा-पचाया पाते हैं। हाँ, समाचारों को मुफ्त बाँटते फिरने का एक नया काम उनको जरूर मिलता रहता है। [कुछ रुक-कर] आपकी अपनी राय भी तो कुछ होती होगी ?

सम्पादक—मेरी राय वही होती है, जो पत्र-संचालक सेठ की होती है।

अजनबी—[हँसकर] अच्छा ! सेठ ने इधर भी हाथ फैला रक्खा है ? पैसे का जाल तो बहुत बड़ा है।

सम्पादक—आप तो पत्रों के बहुत खिलाफ हो रहे हैं।

अजनबी—मैं सच कहता हूँ, कहीं लड़ाई लग जाय और हजारों आदमी मारे जायँ, देश उजड़ जायँ, तो अखबार वालों की आमदनी बढ़ जाती है। इसीसे मालूम होता है कि पत्रों की जिन्दगी आदमियों पर पड़ने वाली विपत्तियों पर कायम है। और यह सब पैसे के लिये किया जाता है।

सम्पादक—[हँसकर] समाचार-पत्रों पर आपका आरोप बड़ा कड़ा है।

अजनबी—मेरी समझ में जो कुछ आया, मैंने कह दिया; तूमा कीजियेगा । [उठ कर] आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई ।

[सम्पादक उठकर उसे विदा करता है ।]

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—लेखक का कमरा ।

समय—प्रातःकाल ।

[पुराने पक्के मकान का एक कमरा, जिसमें भाड़ नहीं लगी है । छत और कोनों में जाले लटक रहे हैं । एक दीवार से एक पुरानी अलमारी सटाकर रक्खी है, जिसमें पुस्तकें भरी हैं । एक रैक पर समाचार-पत्र बिना तरतीब के रक्खे हैं । पुरानी और गन्दी मेज पर कलम, दवात और सादे कागज रक्खे हैं । लेखक धोती-कुरता पहने हुये मेज की एक ओर कुरसी पर बैठा है । सामने की कुरसी पर अजनबी बैठा है । कमरे के एक कोने में तिपाई पर सुराही और शीशे का एक गिलास रक्खा है ।]

अजनबी—आपका मुख्य धंधा क्या है ?

लेखक—लेख और पुस्तकें लिखना ।

अजनबी—किस विषय की ?

लेखक—सम्पादक और प्रकाशक जो चाहते हैं ।

अजनबी—आप सभी विषयों के ज्ञाता हैं ?

लेखक—जिस विषय की इच्छा करता हूँ, उसका ज्ञाता हो जाता हूँ ।

अजनबी—कैसे ?

लेखक—[अलमारी की ओर इशारा करके] यही मेरी ज्ञानेश्वरी देवी हैं । इनके चरणों के पास बैठने से आकाश, पाताल और मर्त्यलोक सब मेरे सिर के अंदर आ जाते हैं ।

[आश्चर्य से अलमारी की ओर देखता है ।]

अजनबी—इस देवी का सिर कहाँ है ?

लेखक—इनका एक नाम सहस्र-शीर्षा भी है । इनके सब सिर इनके पेट में हैं ।

[अजनबी इस पहेली की उपेक्षा करता है ।]

अजनबी—आपका अपना भी कोई सिद्धान्त है ?

लेखक—पैसा कमाना । जल का सिद्धान्त क्या ? उसमें जो रंग डालिये, वही रंग बन जाता है । मेरा भी वैसा ही हाल समझिये ।

अजनबी—किसी ने राज-तन्त्र पर लेख माँगा तो ?

लेखक—तो लिख भेजता हूँ कि भगवान ने दीमकों, चींटियों, मधुमक्खियों, हाथियों और बन्दरों में राज-तन्त्र का नमूना दिखलाकर मनुष्य को उन्हीं का अनुसरण करने की ओर इशारा किया है ।

अजनबी—किसी ने जन-तन्त्र माँगा तो ?

लेखक—तो लिख देता हूँ कि भगवान ने कौबे, कबूतर और मुर्गों के समाज में प्रजा-तन्त्र का नमूना दिखाया है ।

अजनबी—[हँसकर] कोई अनीश्वरवाद पर माँगे तो ?

लेखक—मैं लिखूंगा कि ईश्वर का आविष्कार दुर्बलों और दुखियों ने किया है । जब वे पीड़ा से छटपटाये और उनको उससे

छुटकारा पाने का कोई उपाय न सूझा, तब उन्होंने एक अदृश्य पदार्थ की कल्पना कर ली, जिससे लटके रहकर उनको आत्म-हत्या नहीं करनी पड़ती। सेठों और रईसों के ईश्वर तो डाक्टर, वकील और कलक्टर साहब हैं। उनको ईश्वर की जरूरत ही नहीं है।

अजनबी—ईश्वर के पक्ष में आप क्या लिखेंगे ?

लेखक—मैं लिखूंगा—जो सूर्य में चमकता है, फूलों में मुस्कुराता है, पक्षियों में कलरव करता है, चन्द्रमा से अमृत बरसाता है, नदियाँ जिसको अपने दोनों किनारों से प्रणाम करती हुई चलती हैं, जो प्राणों का भी प्राण और काल का भी काल है, वही जगत का कर्ता, धर्ता और हर्ता है, उससे डरो और स्तुति-प्रार्थनाओं से उसे प्रसन्न रखो।

अजनबी—[हँसकर] आप तो बड़े चमत्कारी पुरुष हैं। अच्छा, गरीबों के पक्ष में क्या लिखेंगे ?

लेखक—ईश्वर ने घमण्डी धनी की तरह सौंदर्य को पृथ्वी पर वे-हि़साब फेंक दिया था। गरीब ने उसे छाँट-छाँटकर अलग किया, सँवारकर रक्खा, जंगलों को साफ किया, बस्तियाँ बसाई, सड़कें निकालीं, नहरें, कुवें और तालाब खोदे, ईंटें पार्थी, पत्थर काटे, महल और भोंपड़े बनाये, रूई और ऊन बटोरे, चरखे और करघे तैयार किये, कपड़े बुने और सिले, चीनी, नमक, कोयला, हीरा, मोती, तेल और लोहा निकाला, अन्न पैदा किया, गरीब ही संसार के सुख और सौन्दर्य का विधाता है। वास्तव में गरीब ही संसार का स्वामी है।

अजनबी—अच्छा, चोर और डाकू के सम्बन्ध में ?

लेखक—जो मनुष्य अपनी जरूरत से ज्यादा जमा कर लेता है, वह दूसरों के दुःख का कारण बन जाता है। जिस तरह दीमक, कौवे और मुर्गे बेकार वस्तु को पड़ी नहीं रहने देते, वैसे ही चोर और डाकू भी हैं। वे बेकार जमा हुए धन को उठाकर धारा में फेंकते रहते हैं। यद्यपि जमा करनेवालों से बनी हुई सरकार उनको पकड़ती, भारती और जेलों में सड़ाती है, पर वे अपना धर्म नहीं छोड़ते। उनका आत्म-त्याग और कर्त्तव्य-पालन प्रशंसनीय है।

अजनबी—[हँसकर] और वेश्या ?

लेखक—अपना शरीर दान करके लाखों गृहस्थों की बहू-बेटियों के सतीत्व को लम्पट धनियों से बचाने वाली देवी है।

अजनबी—[खिलखिलाकर] आप तो बड़े मजेदार आदमी हैं।

अच्छा, आप कभी किसी विषय के पक्ष में लिखते हैं, कभी विपक्ष में। इसका परिणाम क्या होता है ?

लेखक—मैं परिणाम-दर्शी नहीं, मैं बुद्धि का व्यवसायी हूँ। इसका परिणाम मैं अपनी थैली में देखता हूँ। कोई शराब बेंचता है, कोई अफीम बेंचता है, कोई छुरा, बन्दूक और पिस्तौल बेंचता है, परिणाम देखने कौन जाता है ?

अजनबी—पुस्तकें आप किन विषयों पर लिखते हैं ?

लेखक—कह तो दिया, पाक-शास्त्र से लेकर नापाक-शास्त्र तक, सभी विषयों पर।

अजनबी—पुस्तक लिखना जब व्यवसाय हो गया है, तब जान

पड़ता है, इस देश में ज्ञान की भूख बढ़ती जा रही है।

लेखक—आपका यह अनुमान गलत है। भूख नहीं, व्यसन कहिये। लोग पुस्तकें जागने के लिए नहीं, सोने के लिये पढ़ते हैं। वे जबतक जागते रहते हैं, पैसा कमाने में लगे रहते हैं। मैं भी। बहुत से शिक्षित हैं जो शराब से होने वाली हानियों की पुस्तक भी पढ़ते जाते हैं और शराब भी पीते जाते हैं। मेरे एक मित्र हैं, जो वेश्या के घर से आकर वेदान्त की पुस्तक खोलकर बैठ जाते हैं, और कहते हैं कि दिमाग इस समय विकारों से रहित है; वेदान्त का बीज बोने का यही ठीक समय है।

[अजनबी हँसता है।]

अजनबी—पुस्तकों के प्रचार से मनुष्य की बुद्धि बढ़ रही है, या घट ?

लेखक—मेरी राय में घट रही है। एक छंद सुनिये :—

बड़े अनुभववादी लोगों ने यह बात कही है।

मैंने भी अजमाकर देखा, बहुत सही है॥

एक भाग संक्षिप्त और नौ चुप से मिलकर,

बुद्धि बनी है, बुद्धिमान की परख यही है॥

पहले ज्ञान का दान होता था, अब वह दाम लेकर दिया जाता है। इससे उसका मान भी घट गया है।

अजनबी—मगर पुस्तकों से बहुतों ने उन्नति भी तो की है ?

लेखक—पुस्तकों की बदौलत नहीं, सुसंस्कृत कुल में जन्म लेने, माता-पिता के सदगुणों के प्रभाव और गुरुजनों के आशी-

वाद से वे ऊँचे उठे हैं। छापे की मशीन और कागज ने तो मनुष्यों की स्मरण-शक्ति को खा डाला है।

[कुछ देर तक दोनों चुप रहते हैं ।]

अजनबी—लेखन-कला से आपको कोई कष्ट भी है ?

लेखक—मानसिक कष्ट तो बहुत है। पहले तो लाभ का ज्यादा हिस्सा प्रकाशक ले लेता है; दूसरे, वह मेरी पुस्तक चार हजार छपवाता है तो मुझे दो ही हजार बतलाता है, और बाकी दो हजार का मुनाफा खा जाता है। उसकी बेईमानी मन में काँटे जैसी करकती रहती है।

अजनबी—आप खुद क्यों नहीं छपवाते ?

लेखक—पूँजी जो नहीं।

अजनबी—प्रकाशक अपनी पूँजी बढ़ाने के लिये यह बेईमानी करता है।

लेखक—यह तो साफ ही है।

अजनबी—[मन में] लेखक के घर में भी पैसे ने सत्य को पीसकर पी लिया है। [उठकर नम्रतापूर्वक] आपसे बान करके आपका सभ्य-समाज मुझे ज्यादा स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा है; धन्यवाद। अब आज्ञा चाहता हूँ।

लेखक—[उठकर] आपसे मिलकर मुझे भी बड़ी प्रसन्नता हुई।

[हाथ जोड़कर दोनों अलग होते हैं ।]



छठों दृश्य

समय—दिन का तीसरा पहर ।

स्थान—पुस्तक-प्रकाशक का बड़ा हाल-कमरा ।

[हाल बहुत लम्बा चौड़ा है। एक तरफ छपाई की मशीनें चल रही हैं। दूसरी तरफ कम्पोजीटर कम्पोज कर रहे हैं। एक कोने में क्लर्कों की जगहे हैं। हाल के मुख्य दरवाजे के सामने वाली दीवार के पास प्रकाशक पालिश की हुई और शीशा-जड़ी मेज के पास कुर्सी पर बैठा है। पोशाक आधी बाँह की कमीज और पतलून। पैर में बूट या चप्पल। सिर के बाल सँवारे हुये। चेहरा भरा हुआ, गौर वर्ण। उसकी दाहिनी तरफ अजनबी कुरसी पर बैठा है।]

अजनबी—आपका प्रेस कितना पुराना है ?

प्रकाशक—पचास वर्ष से अधिक हुए।

अजनबी—आप किन विषयों की पुस्तकें प्रकाशित करते हैं ?

प्रकाशक—सभी विषयों की। सभी योग्य और प्रसिद्ध लेखकों की पुस्तकें हमारे यहाँ से प्रकाशित होती है। [एक सुसभ्य व्यक्ति दरवाजे से प्रकाशक की ओर आते हुए दिखाई दे रहे हैं।] देखिये, एक तो यही आ रहे हैं। [कुछ ऊँचे स्वर में] ये अत्यन्त लोक-प्रिय नाटक-कार हैं।

[नाटककार प्रकाशक को अभिवादन कर सामने वाली कुरसी पर बैठ जाते हैं।]

नाटककार—[प्रकाशक से] मुझे जरा जल्दी है। मैं अपना हिस्सा

जानना चाहता हूँ ।

प्रकाशक—[रैंक पर से रजिस्टर उठाकर और नाटककार का पृष्ठ निकाल कर] आपका नाटक दो हजार छपा था, जिसमें छः सौ प्रतियाँ अभी बिकने को बाकी हैं। रॉयल्टी का हिसाब हो रहा है, शीघ्र ही आपके पास चेक जायगा ।

नाटककार—[जेब में से एक कागज निकालकर और प्रकाशक के आगे रखकर] मैंने अपने नाटक को कोर्स में मंजूर कराया और इन बुकसेलरों ने आपके यहाँ से उसकी प्रतियाँ मँगवाई, जिनकी संख्या चौबीस सौ होती है। आप कहते हैं, दो ही हजार छपा था, क्या बात है ?

प्रकाशक—[हँसकर] रजिस्टर में संख्या दर्ज करने में गलती हुई होगी; मैं खुद जाँच करके अपने सामने हिसाब तैयार कराऊँगा ।

नाटककार—तो भी आज मुझे कुछ ठीक-ठीक मालूम हो जाय, तो मैं भी अपने आमद-खर्च का अन्दाज़ लगा लूँ ।

प्रकाशक—अच्छा, मैं अभी गिनवा लेता हूँ। जरा देर आप और बैठिये ।

[प्रकाशक दूसरे कमरे में जाता है ।]

नाटककार—[अजनबी से] देखा आपने ? ये प्रकाशक लोग कैसे ठग होते हैं। चार हजार, पाँच हजार छपायेंगे तो लेखक को बतायेंगे दो हजार। बाकी का पैसा आप खा जायेंगे ।

अजनबी—[हँसकर] ये लोग पैसा खाते हैं और पैसा इनके सत्य, लज्जा और शील-संकोच सबको खा लेता है। पैसे की अद्भुत

माया है !

नाटककार—देख तो रहे हैं आप । ये इस देश के बड़े प्रकाशकों में एक हैं और काफी पढ़े-लिखे भी हैं । [प्रकाशक आता है]

प्रकाशक—[कुरसी पर बैठकर] मैंने पता लगाया तो तीन हजार प्रतियाँ छपी थीं । भूल से दो हजार लिखा गया है । आप इतमीनान रखिये, हिसाब में गड़बड़ी न होने पायेगी ।

अजनबी—[मन में] नाटककार अभी कुछ और कहना चाहते हैं । मुझे उठ चलना चाहिए । मेरे सामने प्रकाशक अपने को अधिक अपमानित समझेंगे । [उठकर प्रकट] क्षमा कीजिए, मुझे और भी कई जगह जाना है । अवसर मिला तो फिर दर्शन करूँगा ।

प्रकाशक—[उठकर] अच्छी बात है, फिर कभी दर्शन दीजियेगा ।

[अभिवादन करके अजनबी जाता है ।]



साँतवाँ दृश्य

समय—प्रातःकाल आठ-नौ बजे के लगभग ।

स्थान—संस्कृत के पण्डित का घर ।

[घर मिट्टी का है; खपरैल से छाया हुआ है। घर के सामने फूस से छाई हुई बैठक है। बैठक का फर्श गोबर से लीपा हुआ है। बैठक के एक तरफ एक छोटे-से थाले में तुलसी का पौधा लगा है; उसमें दो-तीन गोल-गोल पत्थर रखे हैं। पास ही नीम का एक पेड़ है।

बैठक में एक और पण्डितजी बैठे हैं। चौकी के नीचे खड़ाऊँ रक्खा है। पण्डितजी की उम्र तीस के लगभग, रूप रंग सुन्दर, माथा चौड़ा और उठा हुआ है। माथे पर चन्दन का तिलक है। सिर और दाढ़ी-मुँछ के बाल मुँड़े हुए हैं। पोशाक—धोती और कन्धे पर एक श्रंगोष्ठा। पण्डितजी के आसपास कुछ विद्यार्थी बोराँ और चटाइयों पर बैठे हुए पढ़ रहे हैं। पण्डितजी के सामने फर्श पर बोरा बिछा है। अजनबी एक और सं आता है और सामने आकर हाथ जोड़कर प्रणाम करता है।]

पण्डितजी—[आशीर्वाद देकर] आइये अजनबीजी ! [बोरे की ओर इशारा करके] बैठिये ।

अजनबी—[बैठकर] आपको मेरा नाम कैसे मालूम हुआ ?

पण्डितजी—यह चर्चा तो आम-नौर से फैल गई है कि अजनबीजी नाम के एक विदेशी सज्जन इस देश की सभ्यता का अध्ययन कर रहे हैं, उस पर वे अपनी राय देंगे। इस गाँव में आपके आने की खबर मुझे एक विद्यार्थी ने दी थी। मैंने अनुमान ही से आपको पहचाना है।

अजनबी—यहाँ की सादगी देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

पंडितजी—यह सादगी तो हमारे साहित्य की देन है। हमारा साहित्य तो संसार में रहते हुये भी संसार से निर्लिप्त रहने की शिक्षा देता है। हमारी प्राचीन शिक्षा के अनुसार मनुष्य को अपने लिये नहीं, बल्कि दूसरों के लिये जीना चाहिये।

अजनबी—[प्रभावित होकर] वह शिक्षा कैसी शान्तिदायिनी थी।
आश्चर्य है, वह छोड़ दी गई।

पंडितजी—जरूर आश्चर्य है।

अजनबी—आपका जीवन तो बहुत सादा है। क्या आप कृपा करके बतायेंगे, समाज पर आपके जीवन का कितना बोझ पड़ता है ?

पंडितजी—मेरी प्रवृत्ति तो बोझ को सदा कम करने ही की ओर रहती है। आज की स्थिति यह है कि जूता सिर्फ शौच जाने और कहीं बाहर जाने के सिवा कभी नहीं पहनता; घर पर दिन भर खड़ाऊँ पहनता हूँ। दो धोतियों और दो अंगोछों से एक साल कट जाता है। जाड़ों में पहनने के लिये दो ही एक कपड़े आवश्यक होते हैं; कम्बल बिछाकर सोता हूँ। साबुन और बाजारू तेल मैं छूता नहीं; धोबी से कपड़े धुलाता नहीं, महीने में दो बार चोटी को छोड़कर बाकी सिर के सारे बाल साफ करा लेता हूँ। सिरपर सरसों का तेल लगाता हूँ। सेफ्टी-रेजर, साबुन और ब्रुश तथा फिटकरी, खुशबूदार तेल, क्रीम, बेसलीन और पाउडर की जरूरत ही नहीं बल्कि उनसे घृणा है। कंधी के लिये बाल ही नहीं रखता। दो वक्त सादा

भोजन करता हूँ। दूध, घी और दही जो मिल जाता है, उसी में सन्तुष्ट हो जाता हूँ। चीनी के बदले गुड़ खाता हूँ। चीनी मिट्टी के बरतन नहीं छूता। शीशे के बरतन भी नहीं छूता। खाट पर सोता हूँ, चौकी पर बैठता हूँ। कहीं जाता-आता भी बहुत कम हूँ। तीर्थों में या विद्वानों की सभाओं में कभी-कभी जाता हूँ, तब रेल के तीसरे दर्जे के किराये के लिये कुछ धन की जरूरत होती है, उसका भी प्रबन्ध भगवान की कृपा से हो जाता है। अतएव समाज पर मेरे जीवन का भार बहुत कम है। जो है, उसे भी घटाने ही की चिन्ता रहती है।

अजनबी—[मन में] यह आदर्श मनुष्य है। [प्रगट] कितने विद्यार्थियों को आप शिक्षा देते हैं ?

पंडितजी—जो आ जायें; कोई निश्चित संख्या नहीं।

अजनबी—कहीं से कुछ वेतन भी लेते हैं ?

पंडितजी—नहीं, हमारे धर्म में ज्ञान का बेंचना अधर्म माना जाता है।

अजनबी—तब आपका साधारण खर्च भी कैसे चलता है ?

पंडितजी—घर में खेती होती है। भगवान् उसमें इतना अन्न दे देते हैं कि घर भर खाते हैं, कुछ विद्यार्थियों को भी खिलाते हैं, तब भी कुछ बच ही जाता है।

अजनबी—[मन में] शिक्षा का यह अद्भुत प्रभाव है और उससे बिलकुल भिन्न है, जो उस ग्रेजुएट को मिली है। [प्रकट] आपने तो अपनी शिक्षा समाप्त कर ली होगी ?

पंडितजी—[हँसकर] शिक्षा तो तब पूरी होगी, जब वह पूर्ण रीति

से जीवन में बस जाय । यदि वह केवल भाषा ही में बसी रह गई तो मनुष्य ने स्वयं अपने को ठग लिया, ऐसा कहना चाहिए । कहने के लिए तो मैं शास्त्री, साहित्य के आचार्य आदि पदवियों से सम्मानित हूँ, पर वास्तव में ज्ञान का एक विद्यार्थी हूँ, और जीवन भर विद्यार्थी ही बने रहने की इच्छा रखता हूँ ।

अजनबी—[मन में] आज तो मैं मनुष्य रूप में किसी देवता का दर्शन कर रहा हूँ । [प्रकट] आप राजनीतिक चहल-पहल में नहीं पड़ते ?

पंडितजी—नहीं; मैं ईश्वर पर पूर्ण विश्वास रखता हूँ । वह संसार का निर्माता और संचालक भी है । कोई मनुष्य स्वतन्त्र नहीं है । मनुष्य ईश्वर के हाथ का चिमटा है, उससे वह कभी जलेबो निकालता है और कभी रूखी-सूखी रोटी सेंक लेता है । चिमटे को क्या अभिमान ? और क्या ग्लानि ? [हँसते हैं ।]

अजनबी—तो देश के नेता लोग जो कुछ कर रहे हैं, सब ईश्वर की इच्छा से कर रहे हैं ?

पंडितजी—मेरी समझ में तो यह आया है कि मनुष्य-मात्र घोर अंधकार में चल रहे हैं । उजाला भी गोरे रंग का अँधेरा ही है । जैसे हब्शी और अँगरेज, दोनों मनुष्य होने में समान हैं, पर रंग में भेद है । कोई शक्ति मनुष्य के पीछे खड़ी है । वह उसके सामने जिधर प्रकाश दिखाती है, मनुष्य उसी तरफ चला जाता है । चाहे वह सुख की जगह हो, चाहे

दुःख की; उसको प्रकाश की सीध में जाना ही पड़ता है। राजनीतिक आंदोलन भी उसी की इच्छा से होता है। इसलिए मैं तो—

केनापि देवेन हृदिस्थितेन

यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोऽमि ।

अजनबी—[मन में] पंडितजी ने तो मुझे एक दूसरी ही दुनिया में खड़ा कर दिया है। ये इस देश की प्राचीन सभ्यता के सच्चे प्रतीक हैं। कहाँ ग्रेजुएट का उलझनों से भरा हुआ जीवन, जैसे बिना पतवार की नाव; और कहाँ पंडितजी का शुद्ध, सात्विक, त्यागमय और अटल विश्वास पर अवलम्बित जीवन; दोनों में कितना अंतर है। वह अपने लिए जीता है, ये दूसरों के लिए जीते हैं। अगर मनुष्य इसी तरह दूसरों के लिए जीना सीख जाय तो संसार स्वर्ग बन जाय। [कुछ देर तक दोनों चुप रहते हैं। अजनबी पृथ्वी पर सिर रखकर प्रणाम करता है।]

पंडितजी—आयुष्मान् भव ।

अजनबी—[मन में] हर्ष की बात है कि यहाँ पैसा परमेश्वर का प्रपंच नहीं चल रहा है। [खड़े होकर, हाथ जोड़कर] अब मैं आज्ञा चाहता हूँ। आपका दर्शन करके मैं तृप्त हो गया हूँ। मेरा अहोभाग्य है !

पंडितजी—[मुसकुराकर] फिर कभी इधर आना हो, तो जरूर मिलकर जाइयेगा।

[अजनबी सिर झुकाकर फिर प्रणाम करता है और जाता है।]

आठवाँ दृश्य

स्थान—एक चित्रकार का कमरा ।

समय—दोपहर ।

[कमरे की दीवारों पर छोटे-बड़े अनेक चित्र टँगे हैं । फर्श पर मेज़ कुर्सी रखे हैं और दरी और कालीन बिछे हैं । एक खिड़की के पास एक अधूरा चित्र स्टैंड पर रक्खा है । पास ही एक तिपाई पर रंगों की प्यालियाँ और कूचियाँ, चाकू और पेंसिलें रखी हैं । स्टैंड के पास एक कम ऊँची कुर्सी भी है ।

चित्रकार एक सुन्दर युवा पुरुष है । मुँह दाढ़ी-मूँछ रहित । सिर पर सँवारे हुए चमकीले बाल । पोशाक—रेशमी कुरता, धोती । पैरों में चप्पल । अजनबी और चित्रकार आमने-सामने एक मेज के पास बैठे हैं । बाहर से किसी के गाने की आवाज आ रही है । अजनबी ध्यान से सुन रहा है ।]

गाना

अब तो चेत अरे अभिमानी ।

कब से चले कहाँ तक आये, कितनी आयु ओरानी ।

साँस साँस घट रीत रहा है, बूँद बूँद कर पानी ॥

अब तो चेत अरे अभिमानी ॥

[चित्रकार उठता है, और बाहर खड़े भिखमंगों को, जो गा रहे हैं, कमरे के दरवाजे के पास जाकर डाटता है ।]

चित्रकार—आगे जाओ, कान खाये डालते हो । बात भी नहीं करने देते ।

भिन्नक—बाबू, बच्चे कल से भूखे हैं, कुछ दया हो जाय ।

चित्रकार—रोज रोज कौन दया करेगा ?

भिन्नक—एक महीने बाद आया हूँ, बाबू जी !

चित्रकार—अभी हमको फुरसत नहीं । आगे जाओ ।

[स्वतः] न वक्त देखते हैं, न बेवक्त । जब देखो सिर पर सवार । एक को एक पैसा दे दिया जाता है तो वह आगे जाकर दस को और भेज देता है ।

[अजनबी तब तक स्टैंड पर रखे अधूरे चित्र को ध्यान से देखता है । चित्र में एक अंधा भिन्नक है, जो बहुत ही बुढ़ा, दुर्बल और चिथड़े पहने हुए है, उसे एक बुढ़ी स्त्री लाठी के सहारे आगे ले चल रही है । अंधे के पीछे एक लड़की [उम्र आठ-नौ वर्ष] और एक लड़का [उम्र छः-सात वर्ष] चल रहे हैं । बुढ़ा दाहिना हाथ फैलाए हुए है ।]

अजनबी—[खिड़की से देखकर मन में] यह चित्र तो इन्हीं भिन्न-मंगों का जान पड़ता है, जो अभी गा रहे थे ! मैंने इनको यही गाना गाते हुए कुछ देर पहले दूसरी सड़क पर देखा था ।

[भिन्नमंगों को आगे भेजकर चित्रकार आकर अपनी कुरसी पर बैठ जाता है ।]

चित्रकार—आइये, आप पहले चित्र देख लीजिए, फिर बैठकर बातें करेंगे ।

[दोनों उठकर एक चित्र के सामने जाते हैं ।]

अजनबी—[चित्र को देखकर] यह तो बड़ा भाव-पूर्ण चित्र है ।

चित्रकार—हाँ, यह मेरे एक असली चित्र का फोटो है । असली चित्र को एक कला-प्रेमी सेठ ने पाँच सौ रुपये में खरीद लिया ।

अजनबी—[मन में] कला-प्रेमी सेठ ने ? सेठ चित्रकार के घर में रुपये लेकर किस उद्देश्य से पहुँचा ?

चित्रकार—[एक दूसरे चित्र के सामने ले जाकर] देखिये, मेरा यह चित्र प्रदर्शनी में सर्वोत्तम ठहराया गया । इस पर मुझे एक पदक मिला है । [चित्रकार एक मेज की दराज खोलकर और पदक निकालकर अजनबी को दिखाता है ।]

अजनबी—[चित्र को फिर गौर से देखकर] चित्र सचमुच पदक के योग्य है ।

चित्रकार—[सरसरी तौर पर अन्य चित्रों को दिखाते हुए स्टैंड पर रखे अधूरे चित्र की ओर संकेत करके] देखिए, यह एक नया चित्र मैंने हाथ में लिया है ।

अजनबी—यह तो उन्हीं भिखमंगों का जान पड़ता है, जो अभी गाते हुये गए हैं ?

चित्रकार—[कुछ भँपकर] हाँ, उन्हीं का है । ये अक्सर इधर से निकला करते हैं । एक दिन मैंने इनका रेखा-चित्र तैयार कर लिया और अब उसमें रंग दे रहा हूँ ।

अजनबी—इस चित्र की कितनी कीमत आप पायेंगे ।

चित्रकार—कोई कला-प्रेमी सेठ मिल गया, तो सौ दो सौ नहीं, तो पचास रुपये तो कहीं गए नहीं ।

अजनबी—[हँसकर] फिर भी उन गरीबों पर आपने दया नहीं की ?

चित्रकार—वे दया के पात्र नहीं । चुपचाप सड़क से निकल जाँय, तो कोई हानि नहीं; चिल्ला-चिल्लाकर वे हमारे दूसरे कामों में बाधा डालते हैं और अन्धे ने तो अपने ऊपर तीन

पेट और लाद रखे हैं । सब पर कहाँ तक दया की जाय ?
 अजनबी—आपके किसी कवि ने कहा है कि—दान हृदय में उत्पन्न
 हुई दया का दाम है ।

चित्रकार—[हँसकर] पर दया उत्पन्न हो तब न ? मैं तो खुद
 पैसे का मुँहताज हूँ ।

अजनबी—इस देश में सेठों और रईसों में कला का प्रेम बहुत देख
 रहा हूँ ।

चित्रकार—[हँसकर] असली कला से बहुत कम, नकल से बहुत
 ज्यादा ।

अजनबी—जरा खुलासा बताइए ।

चित्रकार—आप तो बहुत घूम-फिर चुके, आपने तो देखा ही होगा
 कि बड़े लोगों के कमरों में जंगल, पहाड़, भरने, नदी, नाले,
 सूर्योदय, चन्द्रोदय, फूल, पत्ती और पशु-पक्षियों के सादे
 और रंगीन चित्र टँगे रहते हैं, जिनसे प्रकट होता है कि
 उनको प्रकृति से बहुत प्रेम है; पर यह धोखा है । उनमें से
 शायद ही कोई हो जो असली सूर्योदय देखने के लिए
 सबेरे उठता हो । जो समुद्र के किनारे रहते हैं, उनमें भी
 समुद्र में सूर्योदय देखने की लालसा नहीं होती; पर उसी
 दृश्य का चित्र वे बड़े शौक से और अच्छा दाम देकर
 खरीदते हैं ।

अजनबी—इसका कारण क्या है ?

चित्रकार—पैसे की प्रभुता । पैसे ने ऐसा अधिकार जमा लिया है
 कि आदमी जबतक जागता रहता है, पैसे ही पैसे की धुन

लगाए रखता है। गुलाब का असली फूल उसकी फुलवाड़ी में खिला रहता है, पर उसकी ओर देखने की उसे फुरसत नहीं; वह उसके चित्र को पसन्द करता है। और असली फूल से कहीं ज्यादा दाम उस नकली फूल का देकर उसे खरीदता है और टाँग लेता है। हमारा सारा जीवन ही नकली हो गया है। [चित्रकार जरा देर के लिए विचार-मग्न हो जाता है।]

अजनबी—अब समझ में आया कि सेठ को चित्रों से प्रेम क्यों होता है। इसको फूल से प्रेम तो है, पर असली फूल देखकर कुछ सुख अनुभव करने के लिए उसे फुरसत नहीं, उतनी देर में वह कुछ पैसा कमा लेगा। [मुसकुराता है।]

चित्रकार—[अपनी ही धुन में।] कविता भी कला है। पर कोई अपनी स्त्री के हाव-भाव और रूप को अपनी आँखों से देखकर भी उतना मुग्ध नहीं होता, जितना किसी कवि से उनका वर्णन सुनकर होता है।

अजनबी—आप सच कहते हैं, यह मैं देख चुका हूँ।

चित्रकार—[अपनी ही धुन में] वक्तृता देना भी एक कला है। पर वक्ता ने क्या कहा? इस पर लोग बहुत कम ध्यान देते हैं, कैसा कहा; इस पर ज्यादा। सच्ची बात तो यह है कि कला कला के लिये नहीं, कला पेट के लिए है; आत्मा या मनुष्य-जाति की उन्नति के लिए भी नहीं है।

अजनबी—पर बहुत से लोग तो पेट की चिन्ता से मुक्त हैं?

चित्रकार—उनके लिये कला पाचक चूरन है।

[दोनों हँसते हैं]

अजनबी—[उठकर हाथ जोड़कर] अच्छा, आपने कृपा करके बहुत समय दिया । धन्यवाद !

[चित्रकार उठकर अजनबी को दरवाजे तक पहुँचाने जाता है ।]

नवाँ दृश्य

समय—दोपहर ।

स्थान—किसान का घर ।

[किसान (उम्र लगभग ४०) सिर्फ धोती पहने, उघाड़े बदन अपने मिट्टी के घर के दरवाजे पर फूस के ओसारे के नीचे, पीढ़े पर सामने एक थाली में मक्के का लावा, भुनी हुई अरहर और पत्ते पर नमक, मर्चा और अचार और एक लोटे में गुड़ का शरबत रखे हुए बैठा है, और लावा चबा रहा है । अजनबी आकर भोपड़े के सामने खड़ा हो जाता है ।]

किसान—[चकित होकर] आप कौन हैं ?

अजनबी—मैं एक परदेशी हूँ । आपका गाँव देखने आया हूँ ।

किसान—[एक पीढ़ा रखकर] आइये, बैठिये [अजनबी पीढ़े पर बैठ जाता है । किसान जल्दी से उठकर घर में भीतर जाता है, और एक थाली में लावा व भुनी हुई अरहर और चना और नमक, मर्चा और अचार रखकर लाता है । एक हाथ में एक भरा हुआ लोटा लाता है, जिसमें दही डाला हुआ गुड़ का शरबत है, और अजनबी के सामने रख देता है ।]

अजनबी—यह क्या ? मैं तो सिर्फ आपको हालत देखने आया

हूँ। कुछ खाने-पीने की मेरी इच्छा बिल्कुल नहीं है। [मन में]
गाँव के लोग कितने सहृदय होते हैं।

किसान—[नम्रता से] आप मेरे घर पर आकर कुछ खायेंगे-
पियेंगे नहीं, तो मेरे घर की इज्जत चली जायगी; और फिर
मैं कैसे खाऊँगा-पिऊँगा? [किसान आदर-भरी दृष्टि से अज-
नबी का मुँह देखता है।]

अजनबी—[मन में] “वसुधैव कुटुम्बकम्” का इससे अच्छा दृश्य
देखने को और कहाँ मिलेगा? इनके पास पैसा नहीं है,
इससे परमेश्वर है, और ये मनुष्य-मात्र को भाई समझते
हैं। [प्रकट] मैं आपका यह सत्कार ग्रहण कर लेता हूँ।
आप मुझे कुछ और बातें बताइये।

किसान—मैं तो पढ़ा-लिखा नहीं; जो कुछ जानता हूँ, पूछिये, बता
दूँगा। [दोनों लावा आदि चवाने और बातें करने में लग
जाते हैं।]

अजनबी—आप भी तो वोटर हैं?

किसान—हाँ।

अजनबी—चुनाव के लिए दो उम्मीदवार खड़े हैं; दोनों एम.
ए., एल. एल. बी. हैं, आप किसको वोट देंगे?

किसान—[हँसकर] मैं तो जानता ही नहीं, एम. ए., एल. एल.
बी० किसे कहते हैं। जिसको गाँव के और लोग देंगे, मैं भी
उसी को दे दूँगा।

अजनबी—आपके देश के कानून में तो लिखा है कि वोट अपनी
समझ-बूझ के अनुसार देना चाहिये। समझ-बूझ पर बाहरी

प्रभाव न पड़ने देना चाहिए ।

किसान—मैं खुद तो जान ही नहीं सकता कि उन दोनों में से कौन अधिक काम का है ।

अजनबी—कानून ने मान लिया है कि आप जानते हैं ।

किसान—यह तो जबरदस्ती है ।

[कई किसान आसपास के घरों से और आ जाते हैं और जमीन पर अजनबी के आसपास बैठ जाते हैं । सब नंगे बदन सिर्फ धोती पहने हैं ।]

अजनबी—[मन में] कुछ चतुर लोग मूर्खों को भूठे अधिकार के धोखे में डालकर अपना मतलब साधते हैं । [प्रकट] जो जनता की अधिक सेवा कर सके, उसी को चुनना चाहिए ।

किसान—[हँसकर] सेवा ? सेवा किसकी ? वे अपनी सेवा के लिए वोट माँगते हैं । मेरी सेवा वे क्या करेंगे ?

अजनबी—[मन में] इस देश में सेवा-शब्द एक सुनहला पर्दा है । उसकी आड़ में पैसे का खेल होता है । [हँसता है] अब किसान ही के मुँह से इसका खुलासा कराना चाहिए । [प्रकट] वे तो अपना घर का काम छोड़ कर जाते हैं, कहते भी हैं कि सेवा करने जा रहे हैं; फिर उनका विश्वास क्यों नहीं करते ?

किसान—वे जानते ही नहीं, किसान क्या होता है ? सेवा किस तरह करेंगे ? विश्वास कैसे हो ?

अजनबी—क्यों ? वे जानते क्यों नहीं ?

दूसरा किसान—कैसे जानेंगे ? पाँच बरस की उम्र में स्कूल के कमरे में गये, फिर कालेज के कमरे में गये, फिर युनिवर्सिटी के कमरे में गए, बुद्धि के तेज थे ही, आफिस का कमरा पा गए; कुछ पैसा जमा कर लिया तो चार पहियों वाला टीन का कमरा, जिसे मोटरकार कहते हैं, खरीद लिया और उसमें बैठकर भागने लगे। कमरे तो रोज नये-नये बन रहे हैं, हवाई जहाज का कमरा बना तो उसमें बैठकर उड़ने लगे। पचास-साठ वर्ष की उम्र तक वे कमरे से कमरे ही में घूम रहे हैं, उन्हें क्या मालूम कि किसान क्या होता है ? वे तो जौ-गेहूँ की पत्तियाँ भी नहीं पहचान सकते। वे लोग तो कमराजीवी हैं। उनका हुक्म भी कमरे से बाहर आता है तो वह भी कमरों ही कमरों में घूमकर लौट जाता है।
[सब किसान जोर से हँसते हैं]

तीसरा किसान—भाई, तुम तो पढ़े-लिखे हो, उन लोगों की बातें ज्यादा जानते हो।

अजनबी—[मन में] इनको मूर्ख कौन कह सकता है ? इनकी सरकार सतह पर है और ये तह में हैं। कमराजीवी शब्द खूब कहा—असिजीवी, मसिजीवी, कमराजीवी। [हँसता है प्रकट]
सरकार तो आप लोगों का भला करना चाहती है ?

एक किसान—सरकार की नीयत तो अच्छी ही है, पर उसके हाथ पैर तो उसे धोखा देते हैं। [एक सोशलिस्ट युवक एक तरफ से आता है।]

सोशलिस्ट—देखो, तुम लोग सोशलिस्ट उम्मीदवार को वोट देना।

एक किसान—बहुत अच्छा, सरकार !

[युवक चला जाता है]

अजनबी—आप जानते हैं, सोशलिस्ट किसे कहते हैं ?

वक्त किसान—[हँसकर] सोशलिस्ट याने पैसा । ये लोग पैसे के लिए दौड़ रहे हैं । दिन भर और आधी रात तक इन्हीं की दाँवर चलती रहती है । अभी और आ रहे होंगे ।

[सब किसान हँसते हैं । एक कम्युनिस्ट का प्रवेश । सिर पर लाल टोपी, हाथ में लाल झंडा है । शरीर बहुत दुबला-पतला है]

कम्युनिस्ट—देखो, जमीन और धन सबको बराबर-बराबर मिलना चाहिये । तुम लोग कम्युनिस्ट उम्मीदवार को वोट देना । कम्युनिस्टों की सरकार बनेगी, तभी ठीक-ठीक बँटवारा होगा ।

एक किसान—बहुत अच्छा, सरकार !

[कम्युनिस्ट चला जाता है ।]

अजनबी—एक ही वोट किस-किसको दोगे ?

दूसरा किसान—देखते रहिये । यह सब पैसे का नाच है । मेहनत मजूरी करने वालों का बहुत-सा पैसा एक जगह जमा हो जाता है, उसी चकाचौंध में ये पतंगे उसके चारों ओर नाच रहे हैं ।

दूसरा किसान—पैसा ही इनका परमेश्वर है ।

अजनबी—क्यों ? पैसा आप लोगों को भी तो प्यारा लगता होगा ?

एक बुढ़ा किसान—[हँसकर] पैसा तो परमेश्वर को भी प्यारा लगने लगा है: हमें क्यों न लगेगा ? पर जरूरत से ज्यादा न

हो तो । पहले हमारा काम चीजों की अदला-बदली से मजे में चलता था, जब से पैसे की बाढ़ आई, हम लोगों के पेट तो रीढ़ से चिपक गये और बनियों के तोंदें निकल आईं ।

अजनबी—[मन में] किसान अपनी हालत ठीक समझते हैं ।

(प्रकट) क्यों ? क्या बनिए गरीब नहीं होते ?

बुढ़ड़ा किसान—हो ही नहीं सकते । एक हाथ से देते हैं, सौ हाथ से लेते हैं, वे गरीब कैसे होंगे ?

दूसरा किसान—खेती करें न बनिए जायँ । विद्या के बल बैठे खायँ ।

तीसरा किसान—पहले किसान लोग अपने खेतों को छोड़कर कहीं नहीं जाते थे । भँवरी करने वाले बनिये घोड़ों पर घर गिर-त्ती के जरूरी सामान लादकर गाँव गाँव, घर-घर पहुँचाया करते थे, तब उपज भी अच्छी होती थी और बनियों के पेट तंदूर भी नहीं बनते थे अब तो वे दूकान खोलकर बाजार लगाकर बैठ गये । हमी को उनके पास दौड़कर जाना पड़ता है । भँवरीवाले अनाज भी ले लेते थे, दूकानवाले तो पैसा ही माँगते हैं । पैसा हम पैदा करते नहीं; अनाज का पैसा बनाते हैं, तब काम चलता है । पैसे से बिना मतलब की चीजें भी खरीद लेते हैं । इससे बनिये का धन तो बढ़ता ही रहता है और हमारा अनाज खतम हो जाता है । पैसा न होता, तो हम खाने-पहनने से तो सुखी ही होते । चटकीली मटकीली चीजें घर में न आतीं, न सही ।

अजनबी—बनिए का अर्थ क्या है ?

एक किसान—जो सबको बनाया करे । [सब हँसते हैं ।]

अजनबी—बनाया क्या ?

किसान—बेवकूफ बनाया करे ।

[अजनबी हँसता है ।]

दूसरा किसान—यह भी हो सकता है कि जो सबसे काम बना लिया करे ।

अजनबी—[तीसरे किसान से] तुम भी कुछ बताओ न, भाई ?

तीसरा किसान—जो सबका बनकर रहे ।

अजनबी—[प्रसन्न होकर] हाँ, यह अर्थ ठीक जान पड़ता है ।

[मन में] इन किसानों के बीच में बैठने से चित्त सुखी हो जाता है । कैसे सीधे-सादे स्वच्छ हृदय के लोग हैं । [एक भिखमंगे का प्रवेश जो तानपूरे पर भजन गाता हुआ आ रहा है । सब सुनने लगते हैं ।]

भिखमंगा—[गाता है ।]

भूखे को अन्न पियासे को पानी,

देकर धरम कमाओ, मेरे भाई !

मानुस का तन घाट मिला है,

नैया न आव तो घुमाओ, मेरे भाई !

सोते को बाँह पकड़ के उठाओ,

जागे को राह लगाओ, मेरे भाई !

चाहे हो खँडहर चाहे रजधानी,

हरि को सुमिर सुख पाओ, मेरे भाई !

जय हो, एक चुटकी भीख दे दो ।

[किसान उठता है, और घर के अन्दर जाकर भौनी में भीख लाकर देता है । भिखमंगा आशीर्वाद देता हुआ आगे जात है ।]

अजनबी—(मन में) गाँव की युनिवर्सिटी के यही प्रोफेसर हैं ।

कितनी सुन्दर व्यवस्था है ! किसान अपना काम करते रहें, प्रोफेसर लोग घूम-घूमकर बाजे के साथ मधुर राग-रागिनियों में उपदेश देते रहें, और किसान कान से सुनते और जीवन का सुखदायक रास्ता देखते रहें, काम में हर्ज न पड़े, बल्कि थकावट कम होती रहे और काम अधिक रुचि से होता रहे । साथ ही दान की प्रणाली भी सजीव होती रहे ।

[कुछ देर तक सभी किसान भजन का रस लेते रहे और शांत चित्त से बैठे रहे ।]

एक किसान—[अजनबी से] आपके देश में भी क्या भिखमंगे हैं ?

अजनबी—हाँ, हैं । वे भी इसी तरह गाते हुए भीख माँगते घूमते हैं । यह प्रथा अच्छी है । मालूम नहीं, आपकी सरकार ने इस तरफ ध्यान क्यों नहीं दिया ?

दूसरा किसान—सरकार हमें नये साँचे में ढालना चाहती है । लेकिन साँचा टेढ़ा-मेढ़ा है, उसमें हम समाते नहीं हैं । उसके सब काम खर्चीले हैं । उसको तो पैसा चाहिए ।

अजनबी—[मन में] पैसा ही पाप की जड़ है । जिसके पास पहुँच जाता है, उसीकी बुद्धि भ्रष्टों का जन्म देने लगती है ।

[प्रकट] आप लोग सुखी नहीं हैं ?

तीसरा किसान—सुखी कैसे हों ?

चाकर चोर राज बेपीर ।

कहो कौन विधि धारें धीर ॥

अब सुख कहाँ ? कोई शरीर नीरोग नहीं बचा; अकाल हर साल घर के सामने राक्षस की तरह मुँह बाये खड़ा रहता है; पूँजी-पसार रह नहीं गया; खानेसे कुछ बचता ही नहीं; बनिप से कर्ज लेकर सरकारी लगान चुकाते हैं: चीजें इतनी महँगी हैं कि जान सस्ती हो गई है। इस राज में सुख कहाँ ?

पहला सुख निरोग हो काया ।

दुसरा सुख घर में हो माया ॥

तिसरा सुख सतवन्ती नारी ।

चौथा सुख सुत आज्ञाकारी ॥

[सब कुछ देर तक चुप रहते हैं ।]

अजनबी—[मन में] भापा का जैसा आनन्द गाँव में मिलता है, वैसा शहर में नहीं । वाक्य-वाक्य में मुहावरे, पहेलियाँ, कहावतें, अनुप्रास, श्लोक आदि के दर्शन होते रहते हैं ।

[किंगरी बजाता हुआ एक भिखमंगा आता है और घर के सामने खड़े होकर किंगरी के स्वर में गाने लगता है । सब सुनने लगते हैं । किसान उठकर घर में जाता है ।]

भिखमंगा—[गाता है । सब किसान ध्यान से सुनते हैं ।]

प्रभु जी अब तो खबर लो मेरी । प्रभु जी !

संग न साथ, राह अनजानी, चौमुख रात अँधेरी ॥

पाँव थके, मन बैठ गया है, राह चले बहुतेरी ।

सुनो पुकार सरन आये की, छूट जाय यह फेरी ॥

[किसान घर में से अन्न लाकर देता है। भिखमंगा भोली में लेकर आगे जाता है। किसान अपनी जगह पर आ बैठता है।]

अजनबी—[मन में] भिखमंगे चलते-फिरते उपदेशक हैं। गाँव की भोली में ज्ञान की गूढ़ बातें किसानों को घर बैठे सुना जाया करते हैं। कैसा अद्भुत देश है। [प्रकट] गाँव वालों में बैठकर मुझे बड़ा मुग्व मिला। अब जाऊँगा। [उठता है।]

दो चार किसान—[विनय-पूर्ण] आज ठहरिए। कल जाइएगा। आपने हमारा दुःख पँछकर उसे बहुत हल्का कर दिया है। हम ल ग आपकी कुछ सेवा तो कर ही नहीं पाए।

अजनबी—[मन में] किसी शहर वाले ने ऐसा नहीं कहा। [प्रकट] आप सब को मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ। विना वनावट का प्रेम बहुत ही मीठा होता है। आपका प्रेम विना वनावट का है, जीवन भर याद रखूँगा। अब आज्ञा दीजिए। [चलने को तैयार देखकर सब किसान उठ खड़े होते हैं और हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं। अजनबी जाता है। किसान भी चले जाते हैं।]

दसवाँ दृश्य

स्थान—एक बँगले के सामने का लॉन ।

समय—दिन के चार बजे ।

[लॉन पर एक शामियाना खड़ा है । शामियाने के नीचे दरी, चादर और कालीन बिछे हैं । कई मसनद और छोटे-मोटे तकिये रखे हैं । कवि लोग उनसे पीठ अड़ाकर या कुशनियाँ टेक कर बैठे हैं । उनके आगे पीछे श्रोता बैठे हैं । गद्दी पर एक रईस बैठा है । रईस मलमल का बारीक कुरता और धोती पहने है । उम्र पचास के लगभग, रँग गोरा, चेहरा भव्य, सिर पर सँवारे हुए बाल । मसनद की बगल में चाँदी का पीकदान रक्खा है । रईस की बगल में अजनबी बैठा है । कवि और श्रोता उसे ध्यान से देख रहे हैं ।]

रईस—[बैठे-बैठे] सज्जनों ! हर्ष का विषय है कि आज हम अपने मध्य में अजनबी नाम के एक संस्कारी युवक को पाते हैं, जो दूररे देश से हमारा देश देखने आये हैं और आजकल हमारे देश का भ्रमण कर रहे हैं । आपको हमारी भाषा के मुप्रसिद्ध कवियों से मिलने की इच्छा थी, उसी के लिए यह आयोजन किया गया है । अब एक-एक करके हमारे विख्यात कवि-गण ज्यादा नहीं, अपनी एक-एक उत्कृष्ट रचना सुनायें । [दाहिना ओर के प्रथम कवि को सम्बोधन करके ।] आप अपनी रचना सुनाइये । [अजनबी से] आप कविता-कामिनी-कान्त कहलाते हैं । इनकी रचना में रस का समुद्र उमड़-पड़ता है ।

कवि—[जमकर बैठ कर और गाकर]—

कंचन रंग अतंग प्रभामय अंग अलंकृत नील निचोल ।

लंक महीन पयोधर पीन सुधाकर आनन गोल कपोल ॥

मंजु कटाक्ष रसाल विलोचन मंद हँसी मधु-मिश्रित बोल ।

आई नई दुलही जब से मन-मोहन देख बिके बिन मोल ॥

श्रोतागण—[चिल्लाकर] वाह वा ! क्या कहना है ! फिर सुनाइये ।

[कवि फिर सुनाता है ।]

रईस—वाह ! कविजी वाह ! भापा मधुर, भाव रसीला, आपकी

कविता नई दुलही से कम नहीं है । [अजनबी को छोड़कर
बाकी सब एक साथ हँसते हैं ।]

अजनबी—[मन में] मन-मोहन कोई होगा; लेकिन उसकी दुलही

का हाल सब को खुले-आम क्यों सुनाया जा रहा है ?

रईस—[दूसरे कवि से] अब आप सुनाइये । [अजनबी से] ये

विलक्षण प्रतिभाशाली कवि हैं; जरा ध्यान से सुनियेगा ।

कवि—[गाकर]

साँझ ही से घिर आई घटा चपला चमकी बरसा कुछ पानी ।

प्रात गई सरिता तट को फिसला पग और गिरी मैं उतानी ॥

साड़ी गई सन कीचड़ में अँगिया दरकी सब होश भुत्तानी ।

सास चिढ़ी मुसकाई ननंद हँसे उसके दृग मैं खिसियानी ॥

श्रोतागण—[अट्टहास करके] वाह वा ! वाह वा ! आपने तो

कलम तोड़ दी । फिर कहिए, फिर कहिए । [कवि फिर पढ़ता है ।]

अजनबी—मैं नहीं समझा, यह कहानी कैसी है ।

एक कवि—[धीरे से] अरसिकेषु कवित्व निवेदनम्

शिरसि मा लिख मा लिख मा लिख ।

अजनबी—[सुनकर] कवि महोदय मेरे प्रश्नों से असन्तुष्ट न हों;
मैं एक विदेशी हूँ; यह विषय मेरे लिए विलकुल नया है।
केवल जानकारी के लिए पूछता हूँ; किसी का अपमान करने
के लिए नहीं।

रईस—आप संकोच छोड़कर पूछिये। [कवि से] अजनबीजी को
आप अपनी कविता का भाव समझा दीजिए।

कवि—अभिसारिका नायिका अपने प्राक्तन-कालीन अभिसार की
अनुभूति का वर्णन कर रही है। कीचड़ में साड़ी के लथपथ
हो जाने के असली कारण को छिपाकर वह फिसलकर गिर
पड़ने का वहाना बता रही है। पर ननद समझ गई; वह
मुसकुराई; तब नायिका खिमिया गई।

अजनबी—क्या ऐसी कोई घटना वास्तव में हुई थी ?

कवि—[कुढ़कर धीरे से] हुई थी, तुम्हारे सिर में। जंगली असभ्य
कहीं का !

रईस—कवि लोग घटनाओं का निर्माण अपनी कुशाग्र-बुद्धि से
स्वयं कर लेते हैं।

अजनबी—पर गित्रियों के इस प्रकार के गुप्त अपराधों को सर्व-
साधारण के सामने गाकर सुनाने से क्या लाभ होता है ?
यह तो स्त्रियों को कुलटा बनने की शिक्षा देना है।

कवि—[धीरे से] इस मूढ़ ने तो मेरी एक हफ्ते की मेहनत मिट्टी
में मिला दी !

कुछ श्रोता—आदमी समझदार मालूम पड़ता है, ठीक तो कह रहा है।

रईस—[अजनबी से] कवि लोग दूर से आये हैं; सब की रचनायें सुनकर फिर सब पर स्वतन्त्र-रूप से विचार किया जायगा।

[तीसर कवि से] अब आप अपनी रचना सुनाइए।

कवि—[गाकर]

मोहन ने छवि लेखन के मिस कामिनी का रति चित्र बनाया।

बात ही बात में आँख बचाकर आरसी में उसकी चिपकाया ॥

पूछ उठे फिर भौं मटकाकर क्यों मुख में मसि बिंदु लगाया।

आरसी देख लजानी बहू मुसकाकर एक कटाक्ष चलाया ॥

[श्रोतागण चुप रहते हैं]

रईस—वाह ! कवि जी, वाह ! आपने बड़ा ही मनोहर चित्र खींचा है।

अजनबी—यह मोहन और मनमोहन कौन हैं ? इस तरह के काम ये ही क्यों करते हैं ?

कवि—[कुढ़कर, धीरे से] तुम्हारे बहनोई हैं।

[श्रोतागण अजनबी की बात सुनकर खिलखिला कर हँस पड़ते हैं ।]

अजनबी—(रईस से) क्या इस देश के पढ़े-लिखे और सभ्य-समाज में स्त्री-पुरुषों के हँसी-मजाक को सर्व-साधारण में प्रकट कर देने की चाल है ?

रईस—(कुछ खिन्न होकर) नहीं। (चौथे कवि से) अब आप अपनी रचना सुनाइए। (अजनबी से) आप छायावादी कवि हैं। आपकी हृदय-तंत्री के तार से बड़ा रस बह निकलता है।

कवि—(गाकर)

पूर्णमा को अनंत की ओर

चंद्र की छाया-सी सुविशाल
तुम्हारे केशों की हे सुमुखि !

छाँह में लेकर के विश्राम,
देखता हूँ मैं अपलक चपल

उँगलियों से तुम बारम्बार
सुहासिनि व्योर रही हो बाल,

मनोहर बाल ।

दिखायी पड़ता है वह स्वर्ग

जिन्हें उडुगन कहते हैं अबुध
अहा ! कैसा सुन्दर है स्वर्ग

मदिर नीरव निस्तब्ध !

मनक उठते हैं बिना प्रयास,

हृदय में हृत्तन्त्री के तार ।

मूक आमन्त्रण-सा कुछ सजनि !

मिला करता है बारम्बार,
किन्तु साहस होता ही नहीं

स्वर्ग जितना है समधुर प्रिये !

मार्ग उतना ही है धिकराल ।

[सब श्रोतागण चुप रहते हैं ।]

रईस—[अ जनबी से] काँहये, कैसी कविता है ?

जनबी—इतना ही समझा कि किसी स्त्री को सम्बोधन करके कुछ

कहा गया है ।

रईस—[कवि से] आप समझाइये ।

कवि—समझाना मेरा काम नहीं ।

अजनबी—इस तरह की कविताओं से मैं एक लाभ देखता हूँ ।

एक श्रोता—[उत्सुकता से] हाँ, हाँ, बताइये, क्या ?

अजनबी—छन्द के रूप में नौजवानों को एक ऐसी तरकीब मालूम हो जाती है, जिससे आँखें मूँदकर वे किसी भी सुन्दरी स्त्री को, चाहे जहाँ, बैठे-बैठे पकड़ ले सकते हैं और उसके साथ चाहे जितना समय मौज में बिता सकते हैं । कानून उनका कुछ नहीं कर सकता ।

[श्रोतागण चिल्लाकर अट्टहास करते हैं ।]

एक कवि—[धीरे से दूसरे कवि से] इस उदविलास ने तो सारे तालाब को गन्दा कर दिया ।

दूसरा कवि—[रईस से कान में] भैंस के आगे बीन क्यों बजाई जा रही है ?

रईस—[मन में] रंग उखड़ रहा है, अब जम नहीं सकता ।

[प्रकट] मेरी राय है कि अब कविता-पाठ रात में हो । तब तक सब कवि सन्ध्या-कर्म से निवृत्त हो लें । फिर रात में देरतक बैठक होगी ।

सब कवि—यह सर्वोत्तम है ।

रईस—[अजनबी से] कवितायें आपको कुछ अच्छी भी लगीं ?

अजनबी—लगतीं, यदि इनमें आपके बतेमान समाज की झलक होती । ये तो समाज की कामाग्नि में फूँक लगानेवाली जैसी

हैं । [मन में हँसकर] सेठ का काम जोरों से चल रहा है । [सब चुप । रईस के चेहरे पर कुछ भैंप-सी दिखाई पड़ती है ।]

रईस—[उठकर] अजनबीजी ! हमारे कवि-सम्मेलन में आपने आने का कष्ट किया, इसके लिये धन्यवाद । [सब उठ खड़े होते हैं ।]

अजनबी—मैं भी अपनी स्पष्टवादिता के लिये समस्त कवि महोदयों से क्षमा माँगता हूँ और इस आयाजन के लिए आपको धन्यवाद देता हूँ । [जाता है । साधारण श्रोतागण उसे श्रद्धा से हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं ।]

ग्यारहवाँ दृश्य

समय—शाम ।

स्थान—चप्पलों की दूकान ।

[चौड़ी सड़क पर चप्पलों की एक दूकान । शॉशे-दार अलमारियों में चप्पलों के नमूने सामने सजाकर रखे गये हैं । अन्दर फर्श पर जूट की दरी बिछी है । दरी पर एक लम्बी और पालिशदार मेज है । जिम पर चप्पलों को रखकर एक दुबला-पतला दूकानदार अजनबी को दिखा रहा है । एक खरीदार अजनबी की बगल में खड़ा है । वह एक चप्पल का दाम कर रहा है ।]

खरीदार—[एक चप्पल हाथ में लेकर] इसका क्या दाम है ?

दूकानदार—पाँच रुपये ।

खरीदार—यह सही-सही कितने दिन चलेगा ?

दूकानदार—[हँसकर] मुझे यह मालूम हो कि पहनने वाला कितने दिन बीमार रहेगा, तब तो मैं इसकी सही-सही उम्र बता सकता हूँ ।

[खरीदार हँसता है। अजनबी मुसकुराता है। खरीदार मनी-बेग में से पाँच रुपये निकालकर दूकानदार को देता है और चप्पल लेकर जाता है।]

अजनबी—[अपने सामने का चप्पल दिग्वाकर] इसका क्या दाम होगा ?

दूकानदार—इसका भी पाँच रुपये ।

[मोटर का भोपूँ सुनाई पड़ता है । एक रईस दूकान की सीढ़ियों पर सँभल-सँभल कर चढ़कर ऊपर आता है। सूँछ और रसर के वालों पर खिजाब लगा हुआ; बाल सँवारे हुये। पोशाक—चूड़ीदार पाजामा, सफेद चिकन का अचकन, कलाई में घड़ी, पैरों में काले पालिशदार बूट, चेहरा भरा हुआ, टुड्डी के नीचे माँस लटका हुआ, तोंद बहुत बड़ी। ऊपर आकर कुछ हाँफने लगता है। दूकानदार उसे सलाम करता है।]

रईस—मुझे एक चप्पल चाहिये ।

दूकानदार—[अजनबी के सामने रक्खा हुआ चप्पल दिखलाकर] यह बहुत बढ़िया चप्पल है ।

रईस—दाम क्या है ?

दूकानदार—सात रुपये ।

[रईस मनी-बेग में से रुपये निकालने लगता है। दूकानदार चप्पलों को कागज के बक्स में रखने और तागे से बाँधने लगता है]

रईस—[दूकानदार से मजाक करते हुये] आप तो बड़े दुबले-पतले हैं । मैं कई वर्षों से देख रहा हूँ, आपके बदन पर चर्बी चढ़ी

ही नहीं। कहीं दूसरे जिले में जाइयेगा तो वहाँ वाले समझेंगे कि आपके जिले में बड़ा अकाल पड़ा हुआ है।

[हँसता है]

दूकानदार—गुस्ताखी माफ हो, और हुजूर तशरीफ ले जायँगे तो लोग समझेंगे कि अकाल की जड़ यही है।

[दोनों हँसते हैं। अजनबी रईस को नाचे से ऊपर तक देखकर मुसकुराता है। रईस चप्पल लेकर बाहर जाता है।]

अजनबी—आपने तो इस चप्पल का दाम मुझे पाँच रुपये बताया था ?

दूकानदार—आपके लिये पाँच ही रुपये हैं। ये रईस हैं, सस्ती चीजें पसन्द ही नहीं करते ! मोटर पर आये हैं, धुले कपड़े पहने हैं, खिजाब लगाये हैं, दाढ़ी साफ कराये हैं, पैसे की कमी नहीं, कुछ मुझे भी तो चाहिये। [हँसता है] मैं तो पछता रहा हूँ कि दस रुपये क्यों नहीं कह दिया ?

अजनबी—[मन में] इस देश में पैसे ही पैसे का प्रपंच चारों ओर दिखाई पड़ रहा है, परमेश्वर का तो कहीं पता ही नहीं। परमेश्वर का साथी सत्य तो कोड़ा-काड़ी पर भिंक रहा है।

[प्रकट] वैसा ही दूसरा चप्पल निकाल दीजिये, मैं लूँगा।

[धोती की पैंच में से निकालकर पाँच रुपये देता है। दूकानदार चप्पल निकालकर देता है, और रुपये उठा लेता है। अजनबी चप्पल लेकर दूकान से बाहर जाता है।]

तीसरा अङ्क

पहला दृश्य

समय—शाम ।

स्थान—एक सुसभ्य गृहस्थ का ड्राइंग रूम ।

[एक सुन्दर से बँगले के बरामदे में गृहस्थ आराम कुरसी पर बैठा है । उम्र ५० से अधिक । पोशाक कुरता-धोती । मोछों और बालों में खिजाव लगा हुआ है, और सँवार हुये हैं । रंग श्याम, चेहरा रोबीला । पैरों में चप्पल । सामने दूसरी कुरसी पर अजनबी बैठा है । बीच में एक छोटी-सी सुन्दर मेज है । गृहस्थ सिगरेट पी रहा है । बँगले के सामने फुलवाड़ी है, जिसमें रंग-बिरंगे फूलों की क्यारियाँ हैं । फूल खिले हुये हैं ।]

गृहस्थ—[सिगरेट पीते हुये] कहिए अजनबीजी ! आज आप किससे मिले ?

अजनबी—आज किसी से नहीं मिला । छुट्टी मना रहा हूँ । नदी के किनारे एक मेला लगा था; उसे देखने में काफी समय लग गया ।

[एक नौकर बँगले के भीतर से निकलकर बाहर जा रहा है । उसी समय बँगले के अन्दर किसी चीज के गिरने की आवाज आती है ।]

गृहस्थ—[नौकर से] देखो तो, क्या गिरा ?

[नौकर भीतर जाकर लौट आता है ।]

नौकर—मालकिन-चाय की टूटे लेकर जीने से नीचे उतर रही थीं; पैर फिसला और गिर पड़ीं ।

गृहस्थ—चाय के बर्तन तो नहीं टूटे ?

नौकर—नहीं, वे बच गये । मालकिन ने टूटे को नहीं गिरने दिया, उसे वे हाथ में ऊपर उठाए रहीं ।

अजनबी—[मन में] वाह ! अजब तमाशा है ! मालिक को चाय के बर्तनों के टूटने की ज्यादा चिंता है, मालकिन की बिल्कुल नहीं । नौकर से यह भी नहीं पूछा कि मालकिन को कहीं चोट तो नहीं लगी ? पैसे से मनुष्य का इतना मोह बढ़ गया है कि पत्नी से भी अधिक वह मधुर लगने लगा है । [प्रकट] मालकिन को कहीं चोट तो नहीं लगी ?

गृहस्थ—[उपेक्षा-भाव से] लगी होगी; डाक्टर ठीक कर देगा ।

अजनबी—[मन में] हर एक विपत्ति डाक्टर के लिए लाभदायक ही होती है । पैसे वाले सब आपस में भी एक दूसरे से पैसा छीनने में लगे रहते हैं । [प्रकट] अब जाकर विश्राम करना चाहता हूँ । [उठकर] नमस्कार ।

गृहस्थ—नमस्कार । अवसर मिले तो फिर मिलियेगा ।

अजनबी—अच्छी बात है । [जाता है ।]

दूसरा दृश्य

समय—सायंकाल ।

स्थान— नदी का सुनसान तट ।

[नदी की एक बहुत ऊँची और चौंस कगार पर अजनबी खड़ा है । नदी का दूसरा किनारा भी बहुत ऊँचा है और दूर तक हरे-भरे वृक्षों और घनी झाड़ियों से भरा है । नदी कुछ टेढ़ी बही हुई है, इससे दृश्य और भी मुहावना लगता है । सूर्यास्त होने में थोड़ी ही देर है । अजनबी खड़ा-खड़ा सूर्यास्त के समय का जंगल और नदी का सौन्दर्य देख रहा है ।]

अजनबी—[मन में] माँकी याद आरही है । माँ इस समय रसोई-घर में होगी । माँ मुझे याद कर रही है । [सोचता है ।]

[रूकायक पास की झाड़ियों में खड़खड़ाहट सुनाई पड़ती है । अजनबी उधर देखता है । इतने में चार मुसंड आदमी हाथों में मोटी-मोटी लाठियाँ लिये दौड़कर आते हैं ।]

एक आदमी—जान बचानी हो तो रख दे, तेरे पास जो कुछ हो ।

[चारों अजनबी को घेर लेते हैं । क्षण भर के लिये अजनबी हक्का-बक्का हो जाता है । फिर धोती की पेंच में से सात रुपये पाँच आने निकालता है ।]

अजनबी—[डाकुओं के आगे जमीनपर पेंककर] मेरे पास तो यही है ।

डाकुओं का सरदार—[कुछ चकित होकर] तुम कौन हो ? कहाँ रहते हो ?

अजनबी—मैं तो परदेशी हूँ । आपका मुल्क देखने आया हूँ ।

सरदार—उठा लो अपने रुपये, हम परदेशी को नहीं लूटते ।

अजनबी—[मन में] डाकू में भी विवेक-बुद्धि होती है ! आश्चर्य की बात है । [प्रकट] भाई ! तुम लोग कौन हो ?

एक डाकू—हम लोग डाकू हैं ।

अजनबी—तुम लोग तो भले आदमी जान पड़ते हो, फिर यह काम क्यों करते हो ?

सरदार—पैसे के लिये ।

अजनबी—अच्छा, आओ थोड़ी देर बैठकर बातें करें ।

[सब बैठ जाते हैं । एक डाकू रुपये पैसे उठाकर अजनबी के आगे रख देता है ।]

डाकू—इसे आप रख लीजिये ।

अजनबी—[हँसकर] जरूरत हो तो ले जा सकते हो ।

सरदार—नहीं, नहीं, इसे छूना हम पाप समझते हैं ।

अजनबी—[रुपये-पैसे धोती में खोंसकर] अच्छा, यह बताओ खेती या नौकरी से क्या पैसा नहीं मिल सकता ?

सरदार—मिल सकता है, लेकिन उसमें बड़ी मेहनत करनी पड़ती है । वनिये का पैसा आसानी से मिल जाता है ।

अजनबी—वनिये के पास अगर पैसा न जमा होता तो तुम लोग शायद यह काम न करते ।

सरदार—न करते । क्योंकि तब हमें पैसे की तकलीफ भी न होती । पैसा जब एक जगह बैठ जाता है, तब तकलीफ होने लगती है ।

अजनबी—तुम्हारा मतलब यह है कि पैसा चलता रहे तो तुम भी अपने हिस्से का पा जाया करो। यही न ?

सरदार—हाँ।—अच्छा, परदेशी भाई ! उठिये और मेरे घर चलिये। आज आप हमारे मेहमान हैं। मेरा घर पास ही है। अँधेरा भी होने वाला है, जंगल भी घना है, इसमें भेड़िये, सुअर और चीते भी मिलते हैं, साँप और बिच्छू भी बहुत हैं। रात में हम आपको कहीं जाने न देंगे।

अजनबी—[डाकुओं की सहृदयता से प्रभावित होकर] तुम लोग बहुत भले आदमी हो। चलो, आज मैं तुम्हारे घर में रहूँगा। [सब उठ खड़े होते हैं। अजनबी कगार पर जाकर खड़ा होता है और जंगल की शोभा देखने और कुछ सोचने लगता है।]

सरदार—[एक साथी से] तुम जाकर घर में से एक पलंग बाहर निकलवाओ और उस पर साफ बिछौना बिछवा दो। हम लोग आते हैं। [वह जाता है।]

अजनबी—[मन में] क्या जिस तरह बेकार पड़ी हुई चीजों को नष्ट-भ्रष्ट करके मिट्टी बना देने के लिये प्रकृति कीड़े, मकोड़े, दीमक, मक्खी, मच्छर, चूहे, कौवे और मुर्गे आदि जानवर पैदा कर देती है, उसी तरह जमा हुये धन को उठाकर धारा में बहा देने के लिये चोरों और डाकुओं की भी सृष्टि वही करती है ? अगर यह सच हो तो बनिये की पूँजी ही चोरों और डाकुओं की माँ है। और वह पूँजी अन्न की नहीं, बल्कि पैसे की होती है।

सरदार—चलिये, देर हो रही है। [अजनबी डाकुओं के पीछे-पीछे जाता है]

तौसरा दृश्य

समय—चार बजे शाम ।

स्थान—जज साहब का इजलास ।

[जज साहब मुकदमे का फैसला सुना रहे हैं । अजनबी एक किनारे पीछे हटकर बैठा है । फैसला सुनकर दोनों के वकील अपने-अपने हम राहियों को लेकर जाते हैं । अपराधी रोने लगता है । पुलिस उसे पकड़ कर बाहर ले जाती है ।]

जज—[अजनबी से] आइये, नजदीक आइये । [अजनबी कुरसी खींचकर जज साहब के पास आकर बैठ जाता है ।] आपने अदालत की कार्रवाई देख ली ?

अजनबी—हाँ, देख ली । क्या न्याय हो गया है ?

जज—हाँ, हो गया । दो आदमी एक स्त्री से अनुचित सम्बन्ध रखते थे, एक ने दूसरे की हत्या कर दी । पुलिस ने अपराध प्रमाणित कर दिया । मैंने अपराधी को फाँसी का हुक्म दे दिया ।

अजनबी—यह तो बदला लेने-जैसा काम हुआ ।

जज—कैसे ?

अजनबी—एक बलवान ने दूसरे कमजोर को मार डाला, आप उससे ज्यादा बलवान हैं, आपने उसे मार डाला । आप से भी कोई ज्यादा बलवान हो तो ?

जज—[हँस कर] तो वह मुझे मार डालेगा ।

अजनबी—बदला लेने का सिलसिला तो कभी बन्द ही नहीं हो सकता ।

जज—[सोचकर, मुसकुराकर] बात तो ऐसी ही है । मेरे देश का कानून इसी तरह का है । उसी के लिये तो हम पैसा पाते हैं ।

अजनबी—[मन में] पैसा न्याय में भी पहुँचा हुआ है । [प्रकट] तो यह न्याय नहीं, बल्कि फ़ैसला है ।

जज—हाँ, है तो फ़ैसला ही । आपके देश में ऐसे अपराध की क्या सजा दी जाती है ?

अजनबी—मेरे देश में तो लोहे की एक छोटी-सी गुल्ली होती है । आग में लाल करके अपराधी के माथे पर उससे दाग दिया जाता है ।

जज—यह तो बड़ी बर्बरता है ।

अजनबी—कुछ भी हो, मगर ऐसे दाग वाले देशभर में दो ही चार दिखाई पड़ेंगे । लोग दूर ही से देखकर उनको पहचान लेते हैं, और उनका भीड़ में निकलना कठिन हो जाता है । इस देश में तो फाँसी की सजा होने पर भी लोग ऐसा अपराध करते हैं ।

जज—[सोचकर] सचमुच बड़ा कड़ा दण्ड है ।

अजनबी—फाँसी का दुःख तो एक ही दो मिनट का होता है । और गुल्ली का दाग तो जन्मभर का है । इससे लोग इस तरह का अपराध करने में डरते हैं । और फाँसी पानेवाला तो संसार के सब दुःखाँ से छुट्टी पा जाता है । दण्ड तो

भोगते हैं उसके पुत्र, स्त्री और अन्य कुटुम्बी, जो मुकदमे में सब खर्च करके जीवनभर लिये भिखमंगे बन जाते हैं। एक के अपराध से कड़वां का लम्बा दण्ड भोगना पड़े, क्या यह न्याय कहा जा सकता है ?

[जज विचार-मग्न हो जाता है ।]

जज—सच है, न्याय और फैसले में बहुत अन्तर है ।

[कुछ देर दोनों चुप रहते हैं । अजनबी उठ खड़ा होता है ।]

अजनबी—[हाथ जोड़कर] आपने मुझे मुकदमे की कार्रवाई देखने का अवसर दिया, इसके लिये धन्यवाद है । मैं अब आज्ञा चाहता हूँ ।

जज—[उठकर] आपसे मिलकर मुझे भी बड़ी प्रसन्नता हुई । आपने तो मेरे विचारों में हलचल पैदा कर दी है ।

[जज अजनबी से हाथ मिलाता है । अजनबी प्रणाम करके जाता है । जज भी जाता है ।]

चौथा दृश्य

समय—बारह बजे दिन ।

स्थान—पुलीस के पी. आई. का दफ्तर ।

[दफ्तर के कमरे में कुरसी पर पी. आई. बैठे हैं । सामने मेज है । मेज की दूसरी ओर बेंच पर पुलीस की पोशाक में एक सब इन्स्पेक्टर बैठा है । पी. आई. के बायें मेज की चौड़ाई में अजनबी कुरसी पर बैठा है । पी. आई. सब इन्स्पेक्टर से बातें कर रहा है । अजनबी गौर से सुन

रहा है ।]

पी. आई.—सब गवाह ठीक हैं ?

स० इ०—हाँ, एक को छोड़कर बाकी सब ठीक हैं ।

पी. आई.—वह एक क्या कहता है ?

स० इ०—वह कहता है कि मैं उतना ही कहूँगा, जितना देखा है ।

जो घटाया-बढ़ाया गया है, उसे वह नहीं कहना चाहता ।

पी. आई.—तब तो सारा मुकदमा ही चौपट हो जायगा । बुलाओ तो उसको ।

[सब इन्स्पेक्टर बुलाकर लाता है ।]

पी. आई.—[गवाह से] क्यों जी, तुम मुकदमे को खराब करने आये हो ?

गवाह—[विनयपूर्वक] साहब ! मैं भूठ नहीं बोलूँगा । मेरे खान्दान में कभी कोई भूठ नहीं बोला । मैंने जितना देखा है, सब सच-सच कह दूँगा ।

पी. आई.—[सिर हिलाकर] अच्छा ! धर्मराज के साले बनते हो ? [सब इन्स्पेक्टर से] आपके गवाह हैं, आप ही इनको समझाइये ।

[सब इन्स्पेक्टर गवाह को बाहर ले जाता है ।]

अजनबी—[पी. आई. से] गवाह से भूठ बुलवाना क्या जरूरी है ?

बी. आ.—कानून ही ऐसा है । बिना भूठ बोले मुकदमा चल नहीं सकता ।

अजनबी—कैसे ?

पी. आई.—सब इन्स्पेक्टर अपराधी को पकड़कर मजिस्ट्रेट के

सामने पेश करता है। उसी पर यह भी भार है कि अपराध को प्रमाणित करने के लिये गवाह भी लावे, और पूरा मुकदमा लड़कर और जीतकर दिखावे, नहीं तो उसकी नौकरी पर धक्का आयेगा। इस भय से इन्स्पेक्टर को चुन-चुनकर ऐसे गवाह लाने पड़ते हैं, जो मजिस्ट्रेट के सामने जिरह में न उग्यें।

अजनबी—तो सच्चे गवाह तो शायद ही आते हों ?

पी. आई.—सब इन्स्पेक्टर अपराध का पूरा व्योरा लिखकर मुझे देता है। मैं उसे दफ्ताओं के साँचे में डालकर देखता हूँ। साँचे का जो कोना खाली रहता है, उसे अपने दिमाग से भरना पड़ता है। घटना का जो अंश कुल मुकदमे पर बुरा असर डालता है, उसे काट देना पड़ता है, इससे कोई घटना अपने अमली रूप में न मजिस्ट्रेट के सामने जाती है, और न उस विकृत रूपवाली घटना का कोई गवाह ही होता है।

अजनबी—तब उस सच्चे गवाह को क्यों पकड़ लाये ?

पी. आई.—वह घटना के वक्त मौजूद था। उसको वह गवाही देनी चाहिये, जो दफ्ता के पेट को अच्छी तरह भर दे। उसकी गवाही से मुकदमा मजबूत होगा।

[गवाह रोता हुआ आता है। पीछे पीछे सब-इन्स्पेक्टर भी आता है।]

गवाह—[सिसकते हुये] जो हुजूर कहेंगे, कह दूँगा।

अजनबी—[मन में] मालूम होता है, गवाह को मार-पीटकर भूठ बोलने के लिये राजी कर लिया गया है। अपने पैसे के बचाव लिये सब इन्स्पेक्टर को यह पाप करना पड़ रहा है।

पी. आई.—हूँ, अब रास्ते पर आये न ? [सब इन्स्पेक्टर से] ले जाकर सबको याद करा दीजिये, किसे क्या कहना होगा ।

[सब इन्स्पेक्टर जाता है और पी. आई. के दफ्तर के सामने गवाहों को बैठाकर बताता है कि किसे क्या गवाही देनी होगी । अजनबी खुले हुये दरवाजे से दृश्य देखता है ।]

अजनबी—[मन में] ये लोग पैसा दे-देकर मजबूर किये गये हैं कि समाज में झूठ का प्रचार करो ।

पी. आई.—आपने समझ लिया न ? अगर सब इन्स्पेक्टर को मुकदमा चलाने और जीतकर दिखाने की मजबूरी न होती तो हमलोग झूठ बोलना कभी पसन्द न करते । पैसे ने हमें बाँध रक्खा है ।

अजनबी—गाँवों में सुना कि पुलिस रिश्वत लेती है ।

पी. आई.—आपने ठीक सुना है । पर रिश्वत की जड़ कानून में है, पुलिस में नहीं है । अदालती न्याय इतना महँगा है कि उसे पाने में मामूली मुकदमे में भी सौ-दो सौ रुपए लग जाते हैं; वहाँ पुलिस को दस-बीस रुपये देने ही से पिंड छूट जाता है । [सब इन्स्पेक्टर आकर बेंच पर बैठ जाता है ।] इससे जनता रिश्वत देना स्वयं पसन्द करती है । न्याय महँगा है, इसलिये रिश्वत चलती है ।

अजनबी—अच्छी पेंच है । इससे रिश्वत देकर तो चोरी, डकैती, व्यभिचार, अत्याचार, दुराचार, अनाचार आदि बढ़ते ही रहते होंगे ।

पी. आई.—इसमें क्या शक है ।

अजनबी—आप लोग तो जन-सेवक हैं, अपनी सरकार का ध्यान कानून की इस त्रुटि की ओर क्यों नहीं दिलाते ?

स० इ०—[हँसकर] हम जन-सेवक नहीं, दुर्जन-सेवक हैं। चोर, बदमाश आदि दुर्जनों को पकड़ना और जेल में पहुँचाकर उनको राह पर लाना हमारा काम है।

अजनबी—[हँसकर] साल में कितने आदमियों को आप लोग भूट बोलना सिखा देते होंगे ?

पी. आई.—इस जिले में पन्द्रह थाने हैं। हर एक थाने से हर साल सौ मुकदमे से कम नहीं आते। इन पन्द्रह सौ मुकदमों में कम से कम दस हजार गवाह आते हैं, उनमें शायद ही कोई सच बोलने पाता हो।

अजनबी—अर्थात् कम से कम दस हजार आदमियों को हर साल आपके बरामदे में बैठाकर भूट बोलना सिखा दिया जाता है। [हँसता है।]

पी. आई.—[हँसकर] हाँ, है तो ऐसा ही। किन्तु यह संख्या गलत है, क्योंकि बहुत-से गवाह ऐसे हैं, जो गवाही देने की का काम करते हैं, वे ही बार-बार आते हैं।

[अजनबी हँसता है।]

अजनबी—[उठकर] अच्छा, आपको धन्यवाद है। आपने बड़ी स्पष्टता से अपनी बातें बता दीं। [अजनबी जाता है।]

[पी. आई. और सब इन्स्पेक्टर अपना कागज देखने लग जाते हैं।]

पाँचवाँ दृश्य

समय—रात ।

स्थान—एक सन्त की कुटी के सामने का मैदान ।

[मिट्टी से लिपी-पुती एक सुन्दर सी कुटी है। आसपास सुगंधित फूलों के वृक्ष लगे हैं। कुटी के सामने लंबा-चौड़ा मैदान है, जो लीपकर खूब स्वच्छ बनाया गया है। मैदान भर में जाजिम बिछा है, जिस पर हजारों स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध, युवक और युवती कन्यायें और बहुयें एक तरफ मुंह करके बैठे हैं। कुटी की दाहिनी ओर समकोण बनाता हुआ एक चबूतरा है, जिस पर परदा टंगा है, जैसे कोई नाटक होने वाला हो। अजनबी का प्रवेश। अजनबी भीड़ के एक किनारे आकर खड़ा हो जाता है। उसे देखकर भीड़ की आगे वाली पंक्ति से एक युवक, जो धोती पहने और अँगोछा ओढ़े है, उठकर अजनबी के पास जाता है, और उसे साथ लाकर अगली पंक्ति में एक वृद्धा के पास बैठा देता है।]

एक वृद्ध—[अजनबी से] आप कहाँ से आ रहे हैं ?

अजनबी—मैं एक परदेशी हूँ। आपका देश देखने आया हूँ।

वृद्ध—आ हो ! आप अजनबी जी हैं ?

अजनबी—हाँ, मेरा ही नाम अजनबी है।

वृद्ध—समाचार-पत्रों में आपका नाम सुना था। आप तो हमारे देश भर के अतिथि हैं। हम आपका स्वागत करते हैं।

[वही युवक एक तश्तरी में जलपान और एक गिलास में पानी

लेकर आता है। वृद्धा उसके हाथों से लेकर अजनबी को देती है।]

वृद्धा—बेटा ! कुछ जलपान कर लो। दूर से आ रहे हो, थक गये होंगे।

[अजनबी वृद्धा की ओर श्रद्धा से देखता है, उसकी आँखें सजल हो आती हैं। वह तश्तरी थाम लेता है और जमीन पर रख देता है। गिलास उसके पास युवक रख देता है, और अपनी जगह पर बैठ जाता है।]

अजनबी—[मन में] “बेटा” शब्द सुनकर माँ की याद आती है।

इन गाँववालों का हृदय कितना शुद्ध है ! इनकी दृष्टि में सारा संसार एक परिवार है। देखो न, मैं पराये देश का रहने वाला, क्षण भर में इनका हो गया। [जलपान करता है]
वृद्ध—हमारे यहाँ एक संत महात्मा हो गए हैं। पाँच-छः वर्ष पहले अस्सी वर्ष की आयु में उन्होंने शरीर छोड़ दिया। वे जीवन भर हमारे कल्याण की चिंता में लगे रहे। उन्होंने हमको शरीर-श्रमकी महिमा बताई। वे स्वयं उसके आदर्श थे। हम लोग सब श्रेणियों और सभी जातियों के लोग उनकी याद में वर्ष में चार दिनों तक उत्सव मनाया करते हैं। आज उत्सव का अन्तिम दिन है। अच्छा हुआ, आप भी उसमें शामिल हो गए।

[अजनबी जलपान करके, जल पीकर, गिलास रख देता है। युवक उठा ले जाता है और लौटकर फिर अपनी जगह पर बैठ जाता है। अजनबी कल्याण में महात्मा को एकटक देखने लगता है।]

वृद्धा—बेटा ! महात्मा जी बड़े परिश्रमी थे। गरीबों की तरह रहते

थे, गरीबों की तरह खाते-पहनते थे, और रात-दिन गरीबों ही का ध्यान रखते थे। गरीबों को वे दरिद्र-नारायण कहा करते थे।

अजनबी—आज के उत्सव में क्या होगा ?

बृद्धा—महात्माजी के कामों को लेकर गाँव के लड़के-लड़कियाँ हर साल नाटक बनाते और खेलकर दिखाते हैं। आज उनके एक काम का नाटक है, जिसमें दिखाया जायगा कि महात्माजी और उनकी धर्म-पत्नी गृहस्थ-धर्म का पालन कैसी सचाई से करते थे। उनको काम से घृणा नहीं थी अब नाटक शुरू होने वाला है।

पहला दृश्य

[घंटी बजती है। परदा उठता है। सब देखने लगते हैं। एक बरामदे में पाँच-छः लड़कियाँ अपने-अपने बिल्लौने जमीन पर बिछाकर सोई हुई हैं। एक दरवाजा खुलता है। महात्माजी निकलते हैं। पोशाक घुटनों के ऊपर तक धोती पहने और कंधे पर अंगीछा ओढ़े हुये। वे धीरे से पहली लड़की को जगाते हैं। वह उठ खड़ी होती है। महात्माजी ओठों पर उँगली रखकर उसकी ओर देखते हैं।]

महात्मा—देखो, अभी रात में, दस बजे, गाँवों से अपने बारह साथी आये हैं। सवेरे के चले हुए हैं। उनको खाना देना है। तुम तीन लड़कियों को धीरे से और जगा लो। सब मिलकर रोटी, दाल और एक तरकारी बना लो। देखना, कोई शोर न होने पावे। तुम्हारी माताजी आज तुम सबसे अलग सोने को भेजी गई हैं। कल उन्होंने बहुत काम किया

था। बहुत थकी हुई हैं; उनको अच्छी नींद की जरूरत है। लड़की—मगर आटा तो है नहीं। आज भर का आटा था, शाम को खतम हो गया। चक्की वाले ने सबेरे देने को कहा है।

महात्मा—गेहूँ तो है ?

लड़की—हाँ, है ।

महात्मा—तो घर की चक्की में पीस लेंगे। खाना तो देना ही है।

गेहूँ लाकर चक्की-घर में रख दो, मैं पीस दूँगा। तब तक तुम आग जलाकर दाल डाल दो, और जो तरकारी हो, वही बना डालो। [महात्माजी जाते हैं। लड़की तीन-चार साथियों को धीरे-धीरे जगाती और साथ ले जाती है।]

अजनबी—[धीरे से] ये लड़कियाँ किसकी हैं ?

वृद्धा—गाँव के किसानों की हैं। महात्माजी के साथ उनके आश्रम में रहती हैं और शिक्षा पाती हैं।

दूसरा दृश्य

[चक्की-घर में लालटेन जल रही है। महात्माजी चक्की चलाकर गेहूँ पीसने हैं। गोरें रंग के एक युवक का प्रवेश।]

वृद्ध—[अजनबी से] यह विदेशी था। और महात्मा जी के गहरे मित्रों में से था। यह सदा साथ रहता था। यह बगल की कांठरीमें सोया था। चक्की को आवाज सुनकर आया है।

अजनबी—[मुग्ध होकर, मन में] कहीं मैं यही होता !

युवक—[महात्मा से] यह तो सोने का समय है।

महात्मा—[खूब, हँसकर] भगवान तो बड़े विनोदी हैं न ? अपने भक्तों की कड़ी से कड़ी परीक्षाएँ लेते रहते हैं। बारह साथी

दूर से चलकर देर से आए हैं, उनको खाना देना है। घर में आटा चुक गया है। देखो, अभी तैयार हुआ जाता है।

[युवक भी चक्की पर बैठ जाता है, और चलाने लगता है। लड़की आकर उस समय तक जितना आटा पिस गया था, बर्तन में बटोर ले जाती है। युवक का युवती स्त्री का प्रवेश। स्त्री रात की पोशाक में है।]

स्त्री—यह क्या हो रहा है ?

महात्मा—[ठमकर] आओ, आओ, देखो, भगवान की चक्की चौबीसो घण्टे चलती है।

स्त्री—आप मुझे दीजिये। यह स्त्रियों का काम है।

महात्मा—संसार में काम ही एक ऐसा है, जो जन्म लेते ही जल्दी मरना चाहता है। उसे चाहे स्त्री मारे, चाहे पुरुष। मरकर ही वह आशीर्वाद देता है। वह आशीर्वाद मैं क्यों छोड़ूँ ?

स्त्री—आप वृद्ध हैं, थक गये होंगे ?

महात्मा—अच्छा, जब थकूँगा, तब तुमको सौंप दूँगा; विश्वास रखो।

[लड़की फिर आकर पिसा हुआ आटा बटोर ले जाती है। स्त्री अपने पति युवक के कंधे पर उँगली रखती है। वह उठ जाता है और उसकी जगह स्त्री बैठ कर चक्की का हत्था पकड़ लेती है। युवक चक्की में गेहूँ डालने लगता है। माताजी का चार-पाँच लड़कियों के साथ प्रवेश। सब सफेद धोतियाँ और सलूके पहने हैं।]

माताजी—[महात्मा से] यह क्या हो रहा है ?

महात्मा—क्या तुम अभी तक सो रही हो ? [हँसते हैं।]

माताजी—मुझे जगाया क्यों नहीं ? यह काम तो मेरा था ?

महात्मा—[हँसकर] डर के मारे ।

माताजी—हाँ, मुझे बहुत डरते हो न ?

[माताजी युवती के कन्धे पर हाथ रखती हैं । वह उठ जाती है ।
माताजी बैठकर चक्का चलाने लगती हैं । युवक, युवती और लड़कियाँ
सब हँसते हैं ।] अब तुम छोड़ो, मैं पीस लूँगी ।

महात्मा—अब रहा ही कितना है ? हाँ, अब गृहस्थ का पूरा अंग
अतिथि-सेवा में लग गया है । [हँसते हैं । एक लड़की
का प्रवेश ।]

लड़की—[महात्मा से] भोजन तैयार है, अपने मेहमानों को
बुलाइये ।

महात्मा—[पीसते-पीसते] क्या-क्या बनाया है ?

लड़की—हर एक मेहमान के लिए दो-दो रोटियाँ सेंक ली हैं, बाकी
ताजी-ताजी सेंकती और परोसती जायँगी । रोटियों के सिवा
भात, दो तरकारियाँ, रायता, पकौड़ियाँ और चटनी भी हैं ।

महात्मा—ये सब किसने बनाये ?

लड़की—माताजी ने । चक्की की पहली आवाज सुनते ही माताजी
उठकर रसोईघर में आ बैठी थीं ।

[महात्माजी स्नेह से माताजी को देखते हैं ।]

युवती—हम लोग क्या करें ?

महात्मा—गेहूँ तो अब खतम ही होने वाला है । तबतक गीत
गाओ ।

[एक लड़की मधुर राग में गाती है और बाकी लड़कियाँ उसे मधुर

स्वरों में दुहराती हैं ।]

लड़की—[गाती है]—

हमारे घर, आये अतिथि भगवान ।

अपने अतिथि के पाँव पखारूँ, आगे धरूँ जलपान ।

मधुर वचन से मन जुड़वाऊँ और करूँ गुण गान ।

हमारे घर० ॥

आया करें नित ज्ञान की मूरत, माँगूँ यही वरदान ।

नेह नगर में प्रेम के पाहुन पाया करें सम्मान ।

हमारे घर० ॥

[लड़कियाँ गाना समाप्त करके चुपचाप खड़ी हो जाती हैं ।

अजनबी मुग्ध होजाता है । आँगोले से आखें पोंछता है ।]

मातानी—[महात्मा से] अब तुम उठो, और मेहमानों को लाओ ।

[महात्मा उठकर हाथ-पैर झाड़कर जाते हैं । युवती और एक लड़की माताजी के पीसे हुये आटे को बटोरती हैं । एक लड़की आती है और कुल आटे को ले जाती है । उसके पीछे-पीछे सब चली जाती हैं । उनके पीछे युवक जाता है । नाटक के समाप्त होने की घण्टी बजती है । परदा गिरता है । अजनबी मन्त्र-मुग्ध की तरह कुछ देर बैठा रहता है । शेष दर्शकों में कुछ उठकर चले जाते हैं, कुछ वहीं लेट जाते हैं । वृद्ध, वृद्धा, अजनबी तथा कुछ दर्शक बैठे-बैठे बातें करते हैं ।]

वृद्ध—कहिये अजनबीजी ! नाटक कैसा लगा ?

अजनबी—नाटक देखकर जो सुख मुझे मिल रहा है, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता । आप सब पर तो महात्माजी की शिक्षा का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा दिखाई पड़ता है । अब

कहीं चित्र हो तो मैं उनके दर्शन करना चाहता हूँ ।

[वृद्ध अजनबी को कुटी के भीतर ले जाती है और शीघ्र ही वापस लाती हैं । दोनों अपने-अपने स्थानों पर बैठ जाते हैं ।]

वृद्ध—प्रभाव का क्या पृच्छता ? पाँच कोस के घेरे में जितने गाँव हैं, सब महात्माजी की शिक्षा के अनुसार चल रहे हैं । सब सुखी हैं । हममें मुक्तमेवाजी यन्द हा गई है । न हम क्रोध का दाम देते हैं, न अभिमान का । कभी किसी से कोई भूल हो जाती है, तो वह स्वयं पश्चाताप, व्रत, उपवास आदि करके दण्ड भोग लेता है । हम सब आपस में एक दूसरे की सहायता करते हैं; कभी कटुवचन नहीं बोलते; किसी की निन्दा नहीं करते; और न किसी को तुच्छ समझते हैं ।

अजनबी—फिर भी सब बराबर सुखी तो कैसे होंगे ?

वृद्ध—बराबर सुख का क्या अर्थ है ? हमारे पाँच कोस के घेरे में कोई आदमी भूखा नहीं सोता । [एक घर की ओर इशारा करके] देखिये, वह घर नाजों से भरा है । हर एक किसान अपनी पैदावार का अन्न पाँच मन सैकड़े के हिसाब से उस घर में रख जाता है । अब जिसके पास खाने को न हो, वह उसमें से बिना दाम दिये ले जाता है । वह तो पुण्य ही के लिये है । उसके प्रभाव से हम सबमें एकता और समानता बनी रहती है । पैसे के कारण आदमी बड़ा और छोटा बनता है । हमारे पास पैसा नहीं, और न हम पैसे को अपने बीच में भरसक आने देते हैं । पैसे से व्यापारी को रुपये में पन्द्रह आने लाभ है, हम किसानों को शायद एक आना भी

नहीं। पैसा हमको गरीब बना देता है।

अजनबी—लेकिन बहुत-सी चीजें तो पैसे के बिना नहीं मिल सकतीं।

वृद्ध—हाँ, सही है; पर गृहस्थी में नित्य काम आने वाली प्रायः सभी चीजें हम स्वयं तैयार कर लेते हैं। जो चीजें हम नहीं तैयार कर सकते, उन्हें 'सर्वोदय समाज' की सम्मति से अन्न वेंचकर खरीद लेते हैं। पर आवश्यकता से अधिक हमलोग कोई चीज अपने पास नहीं रखते, और न खर्च करते हैं। यह हमने महात्माजी के जीवन से सीखा है।

अजनबी—और शौक की चीजें ?

वृद्ध—हमें शौक है स्वस्थ शरीर का, दूसरों की सेवा का, स्वच्छता का, दुर्गुणों से दूर रहने का, मधुर वचन बोलने का, घी-दूध का, खेती करने का, उत्तम प्रकार के फल उत्पन्न करने और खिलाने का, सत्पुरुषों का सत्कार करने का, संगीत का, साहित्य का तथा अन्य ललित कलाओं का, ये ही शौक क्या कम हैं कि हम शरीर पर रंग-विरंगे कपड़े भी लाद लें, स्वाद और मिथ्या बढ़ाई के पीछे अपना स्वास्थ्य खराब करें और पैसा चाहनेवालों के गुलाम बनें।

अजनबी—[हँसकर] पैसे से आपको बड़ी घृणा है। अबतक तो मैं पैसे के गुलामों ही में घूमता रहा हूँ।

वृद्ध—पैसा ही पाप का मूल है। हमारे महात्मा पैसे को हाथ से छूते भी नहीं थे। पैसे ही ने बनिये को जन्म दिया है। आदमी पैसे ही के लिये बनिया बनता है, और बनिया हमको

खा जाता है। बनिया विष से बुझे बाणों का एक सजीव तरकस है और पैसे ही उसके बाण हैं। हम उसके निशाने हैं। पता नहीं चलता, किस वक्त वह किस पर निशाना साध रहा है।
 अजनबी—यह सर्वोदय-समाज क्या है ?

वृद्ध—यह एक संस्था है। माताजी [वृद्धा की ओर इशारा करके] इसकी संचालिका हैं। इसी की सम्मति से हम अपना सब काम करते हैं। यह उत्सव इसी का वार्षिकोत्सव है। इसमें हम सब छोटे-बड़े का भेद भूलकर एकत्र होते हैं, एक साथ बैठते हैं, एक साथ खाते-पीते हैं और एक साथ उत्सव मनाते हैं।

वृद्धा—बेटा ! अब चलकर खा-पीकर आराम करो । देर हो रही है; दिनभर के थके हो ।

अजनबी—[स्नेह से वृद्धा की ओर देखकर] माताजी ! मुझे जो आनंद मिल रहा है, उसे छोड़ने को जी नहीं चाहता ।

[एक युवक का प्रवेश]

युवक—अजनबीजी के लिये भोजन तैयार है ।

वृद्ध—चलो, हम सब अजनबीजी के साथ भोजन करेंगे ।

[सब जाते हैं । जो लेट गये थे, वे भी उठकर साथ जाते हैं ।]

— — —

छठा दृश्य

समय—संध्या-काल ।

स्थान—पार्क ।

[अजनबी पार्क में टहल रहा है । कुछ दूरी पर गुलाब की बग़ीचा पास एक सुन्दरी स्त्री खड़ी है । वह खिले हुए गुलाबों को बड़े ध्यान से देख रही है । उसका रंग गोरा, गाल गुलाबी, बाल काले, चिक्के और चमकीले, वस्त्र-स्थल उभरा हुआ और सर्वांग सुगठित उतार-चढ़ाव से युक्त है । वह अनार के फूलों के रंग की साड़ी पहने है और उसी रंग का बेल-बूँटदार जम्पर भी ! वह गर्दन मोड़कर कनखियों से अजनबी को भी देख लेती है ।]

अजनबी—[मन में] दो सौंदर्य आमने-सामने हो गये हैं । इस देश की यह पहली स्त्री है, जिसे निश्चितता के साथ फूलों का आनन्द लेते हुए मैं देख रहा हूँ । भगवान् ने इसे जैसा सुन्दर रूप दिया है, वैसा ही सुन्दर मन भी ।

सुन्दरी—[अजनबी को ठिठका हुआ देखकर] महाशय, क्या आप को भी फूल प्रिय लगते हैं ?

[मुस्कुराती हुई उत्तर की प्रतीक्षा करती है ।]

अजनबी—[नम्रता-पूर्वक] श्रीमतीजी, फूल सुन्दर लगने ही के लिये खिलते हैं । ये दुःखी हृदय को सुखी और सुखी को आनन्दित कर देते हैं ।

सुन्दरी—[सीधी खड़ी होकर गम्भीरता से] आप सब कहते हैं । संसार में यदि कोई प्रसन्न है तो वह फूल ही है ।

[अजनबी एक बार सुन्दरी के मुख-मण्डल पर दृष्टि डालकर फिर फूलों को देखने लगता है ।]

सुन्दरी—क्षमा कीजियेगा, आपका वेश देखकर मैं कौतूहल-वश पूछ रही हूँ कि आप शायद विदेशी हैं ।

अजनबी—[मन में] कितने सुन्दर दाँत हैं, इसके । [प्रकट]
आपका अनुमान सच है, श्रीमतीजी !

सुन्दरी—कौन-सा देश आपके वियोग का दुःख अनुभव कर रहा है ?

अजनबी—[मन में] बड़ी मधुर-भाषिणी भी है । [प्रकट] आपके देश का पड़ोसी ही है । बीच में एक पर्वतमाला है ।

सुन्दरी—[मन में] किसी राजनीतिक कारण से अपने देश का नाम नहीं बताना चाहता, बुद्धिमान आदमी है । [प्रकट]
आपका शुभागमन इस देश में किस अभिप्राय से हुआ है ?
मैं स्त्री-सुलभ कौतूहल-वश पूछती हूँ । कोई न प्रकट करने योग्य कारण हो तो निस्संकोच अस्वीकार कर दीजिएगा और मेरी धृष्टता के लिये क्षमा भी कीजिएगा ।

अजनबी—[मन में] बुद्धिमती भी है । [प्रकट] गुप्त कारण कोई नहीं है, श्रीमतीजी ! आपका देश देखने की इच्छा से आया हूँ ।

सुन्दरी—[प्रसन्न होकर] आपका स्वागत है । आप हमारे अतिथि हैं । कबतक इस देश की शोभा बढ़ायेंगे ?

अजनबी—[सुन्दरी के मुख-मण्डल पर एक उड़ती-सी दृष्टि डालकर, मन में] मन इसकी ओर खिंचा-सा जा रहा है । सौंदर्य में बढ़ा

आकर्षण होता है। जी चाहता है कि यह सदा बोलती ही रहे। इसके दाँत कितने सुन्दर हैं ! बोलती है तो मानो फूल झड़ते हैं !

सुन्दरी—[उत्तर मिलने में देर होती देखकर] मैं ज़मा चाहती हूँ; समय पूछकर मैंने आपको धर्म-संकट में डाल दिया।

अजनबी—[सावधान होकर] नहीं, नहीं, श्रीमतीजी ! धर्म-संकट कुछ भी नहीं है। मैं आपके मधुर भाषण पर मोहित हो रहा था। मैं अब महीने-दो महीने ही में जानेवाला हूँ। दो-तीन वर्षों से बाहर हूँ। माता-पिता की याद आ रही है।

सुन्दरी—अभी आप अविवाहित हैं ? स्त्री की याद नहीं आ रही है ?

अजनबी—हाँ, श्रीमतीजी ! मैं अविवाहित हूँ।

सुन्दरी—यदि आपको कष्ट न हो और समय हो, तो आइये, इस बेंच पर बैठकर अपने भाग्यशाली देश का कुछ हाल सुनाइए। मुझे भी आपही की तरह दूसरे देशों का हाल जानने की बड़ी उत्कण्ठा रहती है।

अजनबी—[मन में] रात की ट्रेन से जाना है और अब किसी से मिलना नहीं है। क्या दर्ज है, इस सुन्दरी के पास थोड़ा समय और बिना लूँ। इसके दाँत बड़े ही मनोहर हैं। [प्रकट] मैं कुछ समय अवश्य दे सकता हूँ।

सुन्दरी—धन्यवाद !

[सुन्दरी आगे-आगे बेंच की ओर जाती है । पीछे पीछे अजनबी उसकी गुलाब के फूल-जैसी ऍड्रियाँ देखता जा रहा है । दोनों बेंच पर अगल-बगल बैठ जाते हैं ।]

सुन्दरी—[मुस्कुराकर] अबो यहाँ आते-आते मेरे मन में आपसे एक प्रार्थना करने की बात सूझी । [हाव-भाव के साथ वक्षस्थल पर पड़ा हुआ आँचल ठीक करते हुये] आप स्वीकार करें तो कहूँ । [मुस्कराती हुई अजनबी का मुँह देखती है ।]

अजनबी—[सुन्दरी के मुख-मण्डल पर एक दृष्टि डालकर] कहिये । [मुनने के लिए दृष्टि स्थिर करके, मन में] आज के जैसी मिठास जीवन में कभी नहीं आई थी ।

सुन्दरी—[कुछ क्षण चुप रहकर, पृथ्वी पर से दृष्टि उठाकर चंचल नेत्रों से अजनबी को देखकर] कहने में संकोच होता है, आप स्वीकार करें या न करें !

अजनबी—[स्त्री के गालों की लाली पर दृष्टि फेंक कर] कहिए, कहिए, मुझसे कोई सेवा हो सकेगी तो मैं अवश्य कर दूँगा ।

सुन्दरी—[प्रसन्न होकर सुग्ध नेत्रों से स्वीकृति चाहती हुई] कल संध्या को चार बजे आप मेरे साथ चाय पीजिये और उसी समय अपने प्यारे देश का मनोरंजक हाल भी सुनाइये । बोलिए, स्वीकार है ?

अजनबी—[मन में] इस अनुपम सुन्दरी का साथ छोड़ने को तो जी नहीं चाहता । फिर स्त्री का अनुरोध है, टालना अशिष्टता होगी और मैं वादा भी कर चुका हूँ । कल इसके सुन्दर दाँत देखने को फिर मिल जायेंगे और मुनने को मधुर वाणी भी । [प्रकट] अच्छा, श्रीमतीजी ! आपका निमन्त्रण मैं स्वीकार करता हूँ ।

[सुन्दरी प्रसन्न होकर उठती है और साड़ी ठीक करने के बहाने

आपने उभरे हुए ओर जम्पर मे छिपे हुये वक्षःस्थल फिर देखने देती है ।
 सुन्दरी—धन्यवाद ! कल आप जरूर आएँगे ? [अपने नाम और
 पते का कार्ड देती हुई] क्या कृपाकर आप बताएँगे कि आपके
 नाम से किन अक्षरों को सम्मान प्राप्त हुआ है ?

अजनबी—(उठकर) मेरा नाम अजनबी है, श्रीमतीजी !

सुन्दरी—धन्यवाद ! बहुत सुन्दर नाम है । नमस्कार !

[सुन्दरी तेजी से जाती है । गुलाब की क्यारी के पास जाकर गर्दन
 मोड़कर और मुस्कराकर फिर देखती है ।]

सुन्दरी—[नेत्रों को चलायमान करके] कल आप अवश्य आयेंगे
 न ?

अजनबी—[हँसकर] अवश्य । आप विश्वास रखिये ।

[सुन्दरी जाती है । अजनबी एक आह के साथ बेंच पर बैठ जाता
 है । थोड़ी देर चुप रहकर यकायक उठ खड़ा होता है ।]

अजनबी—अरे, मैं तो भूल ही गया । आज रात की ट्रेन से तो
 मुझे जाना है । कल मंत्रीजी से मिलने का समय निश्चित
 हो चुका है । स्त्री ने कैसी मोहिनो डाल दी ! (जल्दी से कुछ
 कदम आगे बढ़ाकर) जातो हुई दिखाई दे, तो क्षमा माँग
 लूँ । (इधर-उधर देखता है ।) कहीं दिखाई तो नहीं पड़ती ।
 (सोचता है) चलकर तार दे दूँ कि कल नहीं पहुँच सकता ।
 जैसे कँटिया से मछली पकड़ी जाती है, वैसे ही उसके दाँतों
 की चमक में मेरा मन चिपक कर छटपटा रहा है ।

[तेजी से जाता है ।]

सातवाँ दृश्य

समय—चार बजे शाम ।

स्थान—कोठी का बरामदा ।

(एक विशाल कोठी के एक सुन्दर बरामदे में एक कुर्सी, एक छोटी मेज, मेज पर सिगरेट दियासलाई रखे हैं । उसके पास एक खानसामा खड़ा है । अजनबी का प्रवेश ।)

खानसामा—[अजनबी को दूर से देखकर आप ही आप] आ गया उल्लू । [अजनबी के बरामदे में आने पर सलाम करके] हुजूर, इस कुर्सी पर तशरीफ रखें; मालकिन कपड़े पहनकर आ रही हैं ।

[अजनबी बैठ जाता है और सामने की फुलवाड़ी देखने लगता है । खानसामा कुछ दूर हटकर पीछे खड़ा हो जाता है ।]

अजनबी—फुलवाड़ी की देखरेख, जान पड़ता है, कम होती है ।

खानसामा—हाँ, हुजूर ! कम होती है । मालिक को शौक था, वे गुज़र गये । मालकिन रंज के मारे अब उधर नज़र उठाकर देखती भी नहीं ।

अजनबी—(मन में) वह स्त्री विधवा तो नहीं जान पड़ती थी । मैं ग़लत पतं पर तो नहीं आ गया ? [प्रकट] तुम्हारे मालिक की क्या उम्र थी ?

खानसामा—बहुत बृद्ध हो चुके थे, सरकार !—सत्तर के करीब पहुँच चुके थे । अभी सात ही आठ महीने तो उनको मरे हुए हुआ ।

अजनबी—(मन में) स्त्री तो युवती थी । जान पड़ता है, पति ने वृद्धावस्था में व्याह किया था । (प्रकट) अब कोठी में कौन रहता है ?

खानसामा—मालकिन और दो नौकर । नौकर कई थे; पर मालिक के मरने के बाद एक-एक करके चले गये । हम दो बहुत पुराने थे, बचपन से पले थे, हमने नहीं छोड़ा । मालकिन भी बुढ़िया हो चली हैं । जबतक निभेगा, नमक अदा कर देंगे ।

अजनबी—(कार्ड निकालकर देखता है ।) क्या मैं गलत पते पर आ गया हूँ ?

खानसामा—(मुस्कुराकर) घबड़ाइये न हुजूर ! गलत पते पर नहीं आए हैं । मालकिन ने कल आते ही हुजूर का नाम और पहनावा बताकर हुक्म दे दिया था कि आप चाय पीने आयेंगे । हुजूर का नाम अजनबीजी है न ?

अजनबी—हाँ, मगर तुम्हारी मालकिन बुढ़िया-जैसी तो नहीं लगती थीं ?

खानसामा—(हँसकर) मालिक भी बड़े शौकीन थे, मालकिन भी थीं । मालिक तो मर गए, पर मालकिन का शौक नहीं मरा । इस सूने घर में मालकिन का मन नहीं लगता, इससे साफ़-सुथरे कपड़े पहनकर दोनों वक्त टहलने निकल जाती हैं । और किसी न किसी को जलपान पर, चाय पर या खाने पर पकड़ लाती हैं । अकेली बैठती हैं तो उनसे खाया पिया नहीं जाता; रुलाई आती है ।

अजनबी—तुम्हारी मालकिन की क्या उम्र होगी ?

खानसामा—मालिक से चार वर्ष छोटी थीं, हुजूर !

अजनबी—मैं तो तीस पैंतीस या इससे भी कम समझता हूँ।

खानसामा—[हँसकर] देखियेगा ?

अजनबी—[मन में] किसी स्त्री को लुक-छिपकर देखना बड़ी अशिष्टता है; पर खानसामा को तो अपनी पुरानी मालकिन के सम्मान का ध्यान अधिक ही होगा। देख लूँ, सम्भव है, मेरा ही अनुमान गलत हो। [प्रकट] कहाँ दिखाओगे ?

खानसामा—आइये।

[खानसामा आगे जाता है। अजनबी उसके पीछे। थोड़ी देर बाद अजनबी भैंसा हुआ-सा बाहर आता है और कुर्सी पर बैठता है। खानसामा अपनी जगह पर खड़ा होकर मुसकुराता है।]

अजनबी—[मन में] विचित्र मायावी देश है। समूचा सिर गंजा, बैल जैसा; कहीं बाल का नाम नहीं; चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ी हैं; गाल पिचकं हुए हैं; गले का मांस भूल रहा है, मुँह पोपला है; विलकुल चुडैल जैसी शकल है। कल मैं खूब उल्लू बना। अब आज मुझे नये सिर से बनाने के लिये बनठन रही हैं। रात की दूँ ने भी छूटी, मन्त्री से मिलने का वादा भी गया, सपने की सम्पत्ति भी हाथ नहीं आयी; अब क्या करूँ ? मिलूँ या नहीं ? [प्रकट] कल तो तुम्हारी मालकिन के सिर पर लम्बे, काले और लच्छेदार बाल थे ?

खानसामा—आज भी हैं। वह क्या है, बालों की टोपी खूँटी सलटक रही है। आपने नहीं देखी ?

अजनबी—और दाँत ?

खानसामा—तिपाई पर रक्खे हैं, मैंने दिखाया तो ?

अजनबी—और गुलाबी गाल ?

खानसामा—डिवियों में हैं । [खिलखिलाकर] आप परदेशी हैं; इस मुल्क की माया नहीं जानते । बेसलिन, स्नो, क्रीम, पाउडर, लिपस्टिक, ये सब डिवियों में रक्खे हैं । अभी गालों को को गुलाबी कर लेंगी ।

अजनबी—[मन में] मैं बहुत बेवकूफ बना । [प्रकट] और भुर्रियाँ कहाँ चली जाती हैं ?

खानसामा—क्लिपों के कब्जे में । नन्हें-नन्हें क्लिप हैं, भुर्रियाँ खींचकर उनको पकड़ा देती हैं । माथे के क्लिपों को टोपी के नीचे तथा गालों और गले के क्लिपों को सलूके और साड़ी की आड़ में बैठा देती हैं । मालकिन साड़ी पहनना बहुत अच्छा जानती हैं ।

अजनबी—कल शरीर के कुछ हिस्से खूब उभरे हुए थे ।

खानसामा—[हँसकर] आपने छाती देखी होगी । वह क्या हैं, खूँटी से लटकते हुए रबर के दो कटोरे । उन्होंने आपको बहुत परेशान किया होगा ।

अजनबी—[मन में कुढ़कर] बदमाश कहीं का; जले पर नमक छिड़कता है । [प्रकट] सब धोखा ही धोखा है ।

खानसामा—सोलहो आने ।

अजनबी—जिस छेद से तुमने मुझे यह सब दिखलाया, क्या वह इसी काम के लिये बनाया गया है ?

खानसामा—नहीं, हैंडिल निकल गया, तब से लगाया नहीं गया,

उसी का छेद है ।

अजनबी—तुम्हारी मालकिन पढ़ी-लिखी है ?

खानसामा—युनिवर्सिटी पास हैं । मालिक के साथ ही पढ़ रही थीं ।

वहीं दोनों में प्रेम हो गया था ।

अजनबी—[उठते हुए] बाहरी सभ्यता और शिक्षा ! इस उम्र तक छल नहीं छूटा । पैसे ने स्त्री-पुरुष दोनों को बहुरूपिया बना दिया है । इस जादू-घर में अब भागने ही में खैरियत है ।
[तेजी से जाता है ।]

खानसामा—अरे साहब ! चाय तो पिये जाइये । (अजनबी कुछ उत्तर न देकर चला जाता है ;) जाइए. इसी तरह रोज हम भले-मानसों को उल्लू बनने से बचा देते हैं और डटकर चाय पीते हैं, बढ़िया खाना खाते हैं और मालकिन के सुख दुख में शरीक रहते हैं । देखें, मालकिन सज-बजकर परी बन चुकी होंगी । (सिर और हाथ हिलाकर) पर उल्लू तो उड़ गया ।

(हँसता है ।)

आठवाँ दृश्य

स्थान—एक चमार के झोपड़े के सामने की एक खुली जगह ।

समय—शाम ।

[चमार के सड़े-गले झोपड़े के सामने नीम के एक छायादार पेड़ की छाया में गोलाकार भीड़ जमा है । बीच में नाच हो रहा है । भीड़ में ज्यादातर गाँव के किसान और मजदूर श्रेणी के लोग हैं । धोती के बिना शरीर पर और कपड़े तो शायद ही कोई पहनें हो । अजनबी अपने सफेद धुले हुए कपड़ा—कमर में धोती और कंधे पर दुपट्टे से पहचाना जाता है ।]

पात्र

नाच-मण्डली का एक सरदार है, जिसके हाथ में कांसे का एक चपटा कटोरा है, जिसके एक किनारे पर एक छेद है । उसमें मजबूत तागा डालकर वह उसे बायें हाथ के अंगूठे से लटकाये हुए है । दाहिने हाथ में ढाई-तीन इंच लम्बी और पाँच-छः सूत मोटी पीतल की एक गুল्ली है, जिससे वह कटोरे को बजाता है । काँख में जूते का एक तल्ला दबाये हुये हैं । सरदार की पोशाक धोती, कुरता और बड़ी-सी पगड़ी ।

दो लड़के—जो छोकड़े कहलाते हैं; उम्र बारह से बीस वर्ष तक देखने में सुन्दर । पोशाक रंगीन लँहगा, चोली और ओढ़नी । एक के हाथ में बाँसुरी । सिर के बाल स्त्रियों की तरह सँवारे हुए । हाथों पैरों और गले में स्त्रियों के गहने, जो कासा, गिलट या रागे के बने हुए हैं, पहने हैं ।

करिंगा

पचीस-तीस वर्ष का एक जवान, घुटनों व नीचे तक काला अंगरखा, अंगरखे पर किसी दूसरे रंग की फतुही और कमर में लहंगा पहने हुए, आधा पुरुष और आधा स्त्री के रूप में है। फतुही की पीठ पर करीब एक एक फुट लम्बा और लुः इंच चौड़ा मोटा चमड़ा जड़ा हुआ है। हाथ में बैल या भैंस का एक सींग और बामुरी लिये है।

मृदंग बजाने वाला धोती, कुरता और पगड़ी की पोशाक में (उम्र तीस चालीस)। मृदंग कमर से लटकाकर छोकड़ों के पीछे बजाता चलता है।

सारंगी और मजीर वाले-छोकड़ों के अगल-बगल रहते हैं, और जब छोकड़े गाते हैं, तब वे बजाने हैं। नाच शुरू करना हाता है तो सरदार कटोरा बजाता है और छोकड़े नाचने और बाजेवाले बजाने लगते हैं। करिंगा बीच-बीच में बामुरी भी बजाता है।]

छोकड़े—[एक साथ नाचकर छोकड़े पारी-पारी से गाते हैं:—]

पिरितिया अब ना करवै हो।

एक जने से प्रीति करु, जासे मन पतिआय।

जने जने की प्रीति से, जनम अकारथ जाय ॥

पिरितिया अब ना करवै हो।

प्रीति करे तो अस करे, जस मजीठ को रंग।

धोये से छूटै नहीं, जाय जिया के संग ॥

पिरितिया अब ना करवै हो।

अजनबी—[मन में] आहा ! ये गरीब लोग तो सेठों से ज्यादा सुखी जान पड़ते हैं। इनके पास पैसे होते तो ये भी छल-

कपट और गुप्त अपराधों के चलते-फिरते बोरे बने होते । देखो न, भगवान के राज में इनको न किसी से स्पर्धा है, न किसी से द्वेष । समय पाते ही भोपड़ी को भी आनन्द से भर लिया करते हैं ।

[छोकड़े नाच-गाकर चुप हो जाते हैं । करिंगा बड़े जोर से हँसता है; कई तरह की हँसी हँसता है, भूमभूमकर हँसता है, इधर-उधर घूमकर हँसता है ।]

सरदार—अरे, क्यों इतना हँस रहा है ? भाँग तो नहीं पी ली है ?
करिंगा—[हँसता हुआ] भाँग, भाँग, भाँग; माँग कर पिओ, छल्लाँग मारो, एक फल्लाँग पर गिरो, टाँग दूट जाय तो डाँग लेकर दौड़ो । हा, हा, हा, हा, हा, हा । [घूमकर] क्या मजे की याद है !

सरदार—[तल्ला जड़कर] क्या याद आ रही है ? बताता क्यों नहीं ?

करिंगा—बताऊँ ? अच्छा सुनो । कल तकाबी लेने गया था ।

सरदार—फिर ?

करिंगा—बड़ी भीड़ थी । तिल धरने को जगह नहीं थी । तहसील-दार साहब एक वाड़े में मेज लगाकर बैठे थे । मुझे भी पंद्रह रुपये मिलनेवाले थे । मैं कई मोरचों पर लड़ता-भिड़ता और जीतता हुआ, किसी तरह उनके पास पहुँचा, और पंद्रह रुपये पा गया । लेकिन भीड़ के बाहर आया तो कर्तार का खेल तो देखो, मेरे हाथ में दो ही रुपये रह गये थे ।

सरदार—कहीं गिरा दिया होगा ?

करिंगा—मैं ऐसा गाफिल नहीं। मैं फिर भीतर गया और दोनों रुपये तहसीलदार के सामने रखकर मैंने कहा—लीजिए, आप ही क्यों वाकी रहें ? वे मेरी ओर आँखें गुरेर कर देखने लगे ।

सरदार—उन्होंने कुछ कहा नहीं ?

करिंगा—कहा । कहा कि यह क्या है ? मैंने कहा—एक रुपया पेशकार ने ले लिया, एक रुपया खजांची ने, एक रुपया अन्दर के चपरासी ने, एक रुपया फाटक के चपरासी ने, एक रुपया कांस्टेबल ने और कुल का आधा पटवारी ने, जैसा उसमे तै हुआ था । कुल कितने हुए ? साढ़े बारह । आठ आना वनिये ने ले लिया । कल से टिका हूँ । वाकी बचे दो, इन्हें आप ले लीजिए, जैसे तेरह दूँगा, वैसे दो रुपया और सही । सुनते ही सबका मुँह [उँगलियों का संपुट बनाकर] ऐसा हो गया । [हँसता है ।]

सरदार—फिर ?

करिंगा—फिर क्या ? तहसीलदार साहब ने जो आँख तरेरी, तो सब की धोतियाँ ढीली हो गई और पाजामे सरक पड़े । सब से रुपये दिलवाये । मैं मोँछों पर ताव देता हुआ घर आ गया ।

सरदार—[तल्ला जड़कर] तू सब की इज्जत उतारने गया ?

अजनबी—[मन में] करिंगा सरकार पर तीर मार रहा है । चमारों के नाच को वास्तव में “आलोचना-नाच” कहना चाहिये ।

[सरदार कटोरा बजाता है, छोकड़े नाचने लगते हैं ।]

छोकड़े—[पहले नाचकर फिर गाते हैं ।]

चित्तै दे मेरी ओर, करक मिटि जाइ रे ।

निर्धन गिरा पहाड़ से, कोई न पूछी बात ।

साहूकार के काँटा गाड़िगा, मच गया हाहाकार ॥

चित्तै दे मेरी ओर, दया की एक कोर ॥

मेरा तेरा मुनो मजरो, चोली दामन साथ ।

तुम तो रहो किनारा पकड़े, माल सेंठ के हाथ ॥ चित्तै०

अजनबी—[ठट्ठाका मारकर] खूब समझा । दामन तो सचमुच
पहरेदारी ही करता है ।

[सरदार कटोरा बजाना बंद करता है । नाचना गाना और वाजा
बंद हो जाता है । करिगा सींग बजाता हुआ इधर-उधर अकड़ता
चलता है ।]

सरदार—[करिगे से] अब क्या सोच रहा है ?

करिगा—[आँखें मटककर] सोच रहा हूँ कि खूब पाप करूँ ।

कानून की किताब में जितने तरह के पाप खूब सोच-सोच
कर लिखे गये हैं, सब कर डालूँ ।

सरदार—क्यों ? पाप करने का शौक क्यों हो रहा है ?

करिगा—[मुँह, आँखें और गरदन मटककर] अगले जन्म में डिप्टी
साहब होना चाहता हूँ ।

सरदार—[करिगे की पीठ पर तल्ला जड़कर] मूर्ख कहीं का, जमीन
पर लेटकर नारियल तोड़ना चाहता है । पाप करने से डिप्टी
साहब कैसे बनेगा ?

करिंगा—[स्थिर होकर] देखो, इस तरह । पचीस वर्ष तक पढ़ूँगा; कोट-पतलून पहनना सीख लूँगा, बूट में पालिश लगाना, माँग निकालना और बकसुआ कसना सीख लूँगा, तब डिप्टी साहब बनकर इजलास लगाकर अकड़कर [अकड़ने का भाव दिखाकर] कुरसी पर बैठूँगा ।

सरदार—फिर ?

करिंगा—फिर क्या ? फिर तो आकर देखना, पचपन वर्ष की उम्र तक लगातार, रोज दस बजे से चार बजे तक, पूरे छः घंटे तीन सौ साठ मिनट से एक भी कम नहीं, बैठकर गुन्धों, लुब्धों, लफंगां, बदमाशों, चोरों, डाकुओं, उचकों, गँठकटों, आवारों, धोखेबाजों, शोहदों, औरतों को उड़ाने वालों, कुटने, बदमिजाजों, उजड़ों, हूशों—

सरदार—[पीठ पर तल्ला जड़कर] अरे, कहीं खतम भी करेगा ?

करिंगा—नालायकों, जुआरियों, गवन करने वालों, दँगाइयों, गँजे-ड़ियों, भँगेड़ियों, शराबियों, [सिर खुजलाकर सोचकर] रिश्वतखोरों, चोरवाजारियों को एक-एक करके पकड़ मैंगाऊँगा ।

सरदार—इनको पकड़कर क्या करेगा ?

करिंगा—उनकी गंदी से गंदी कहानियाँ पूछ-पूछ कर लिखा करूँगा । कहीं वे भूल जायँगे तो जिरह करके पूछ लिया करूँगा । बड़ी मीठी लगेंगी । [जीभ चाटता है ।]

सरदार—लगातार तीस वर्षों तक तू गंदी कहानियाँ ही सुनता और लिखता रहेगा ? तेरा जी नहीं ऊबेगा ?

करिंगा—[आखें मटकाकर] ऊबेगा क्यों ? मेरी ही पिछले जन्म

की कहानियाँ तो वे होंगी । नये सिरे से याद करके [आंखें मूँदकर] मस्त होता रहूँगा । बड़ी मीठी लगेंगी, बड़ी मीठी ।
[आंखें मुलमुलाता है]

सरदार—[तल्ला मारकर] चुप रह । डिप्टी साहब सुनेंगे तो जेल की हवा खानी पड़ेगी ।

अजनबी—[मन में] बाह वा ! यह डिप्टी साहबों के जीवन का चित्र है । चमार सबसे नीचे से देखता है, इसमें उसे सब अमली रूप में दिखाई पड़ता है ।

[इशारा पाकर छोकड़े गाने और नाचने लगते हैं । बीच-बीच में करिगा सींग बजा देता है ।]

छोकड़े—[गाते हैं]

चले चलो चले चलो चले चलो रे ।
राजा राम की डगरिया में चले चलो रे ॥
हाथ चले, पाँव चले, ज्ञान चले रे ।
कहीं गिरे न पलक नाहीं ध्यान टले रे ।
कोई जाये न बिछुड़ साथ जोड़े चलो रे ।
बाँधे पुन्य चलो भारी जस छोड़े चलो रे ॥
राजा राम की ० ॥

[गाकर छोकड़े फिर नाचते हैं ।]

अजनबी—[मन में] कितना सुन्दर उपदेश है । राजाराम की डगर में ऐसा ही चला जाता है । पैसे की डगर में सब साथ नहीं चल सकते ।

[बाजे बन्द हो जाते हैं; छोकड़े नाचकर खड़े हो जाते हैं ।]

बोकोड़े—[गाते और नाचते हैं ।]

सिर धरे मटुकिया डोलै रे ।

दहि को नाम भूलि गई ग्वालिन,

हरि लो हरि लो बोलै रे ॥ सिर धरे ० ॥

पुतली पलंग बिछाय सोवाए,

आंखि मूँद नहिं खोलै रे ॥ सिर धरे ० ॥

अजनबी—[मन में] गँवारो की कविता में जो रस है, वह कवि-

सम्मेलन के कवियों की कविता में नाम-मात्र को भी नहीं ।

वह तो पूरी दिमागी ऐय्याशी ही है ।

[सरदार क्रोध बन्द करता है । लोकड़ों का नाचना-गाना बन्द हो जाता है ।]

[करिगा सींग बजाता हुआ इधर उधर घूमता है ।]

सरदार—अब क्या मोच रहा है ?

करिगा—लालाजी के महल्ले में कल बड़ी खुशियाँ मनाई जा रही थीं ।

सरदार—क्यों ? खुशों की कोई बात हुई होगी ?

करिगा—न लड़का हुआ है, न लड़की; लालाजी ने साठ वर्ष की उम्र में सोलह वर्ष की एक अप्सरा से तीसरा व्याह किया है ।

सरदार—अप्सरा में ! कैसे उस गाजर जैसी नाक वाले, अफीम जैसे रंग वाले, शरीफे के बीज जैसे दाँतों वाले खूब को अप्सरा ने पसंद किया ?

करिगा—अप्सरा ने तो पैसे से व्याह किया है । पैसा कितना खूब-

सूरत होता है, तुम तो जानते ही हो । [हँसता है ।]

सरदार—फिर ?

करिगा—[मुँह टेढ़ा करके] फिर बात उड़ गई फुर्र ! अरे, महल्ले के अँडुवों, रँडुओं और भँडुओं को बैकुण्ठ दिखाई पड़ने लगा है ।

सरदार—[तल्ला मारकर] पाजी कहीं का, सबका मजाक ही उड़ाता है ।

[सरदार कटोरा बजाता है । छोकड़े नाचने-गाने लगते हैं । करिगा बीच-बीच में सींग बजा देता है ।]

छोकड़े—[कुछ देर नाचकर गाने लगते हैं ।]

पुमव से आइ रेलिया पछिउँ से जहजिया,

पिय के लादि लेइ गइ हो ।

रेलिया होइगै मोर सवतिया,

पिय के लादि लेइ गइ हो ॥

रेलिया न बैरी जहजिया न बैरी,

उहै पइसवै बैरी हो ।

देसवा देसवा भरमावै,

उहै पइसवै बैरी हो ॥

मुखिया न लागै पिअसिया न लागै,

हमके मोहिया लागै हो ।

तोहरी देखि के सुरतिया,

हमके मोहिया लागै हो ॥

सेर भरि गोहूँवा बरिस दिन खावइ,

पिय क जाइ न देवइ हो ।
 रखवै अँखिया के हजुरवाँ
 पिय के जाइ न देवइ हो ।

[गाकर छोकड़े नाचने लगते हैं ।]

अजनबी—[मन :] सच है, पैसा ही वैरी है । समाज में सारे
 अनर्थों की जड़ पैसा ही है । बिना पढ़े-लिखे लोग भी पैसे
 के अपराधों को समझते हैं । [छोकड़ें नाचकर खंड हो जाते हैं ।
 करिगा डुधर-डुधर टहल रहा है ।]

सरदार—अरे, क्या मोच रहा है ?

करिगा—गँगे का गुड़ है, कह नहीं सकता ।

सरदार—अरे, तो जरा-सा गुड़ दूसरों को भी दे । कुत्ते की तरह
 अकेले-अकेले क्यों खाता है ?

करिगा—तो तुम कोबे की तरह मिलकर खाओ ।

सरदार—[तल्ला जड़कर] जवान सँभालकर नहीं बोलता ? बताता
 क्यों नहीं, क्या सोच रहा है ?

करिगा—[गाकर]—

ये न थी हमारी किस्मत कि बिसाले यार होता ।

या वह पुजारी होता या मैं चमार होता ॥

सरदार—यह क्या है ?

करिगा—मन्दिर के पुजारीजी चमार के एक लौंडे पर आशिक हैं,
 उन्हीं के मन का दुख मैं ढो रहा हूँ । [रुँह बनाकर] बड़ा
 भारी है ।

सरदार—[तल्ला जड़कर] रात-दिन दूसरों ही का रोना रोता

रहता है ।

छोकड़े—[सरदार का इशारा पाकर गाते हैं ।]—

धन्य पुरुष नारि भाँग करकसा नारि मिली ।

सात घरी दिन रोय के जागीं लिहिन बढ़निया उठाय ।

निहुरे निहुरे अँगना बटौरैं घर-भर को गरिआय ॥

करकसा नारि मिली ।

चत्तरी ऊपर कौवा रोवै पाहुन आये तीन ।

आओ पाहुन कुरुर रखाओ, कण्डा लाऊँ बीन ॥

करकसा नारि मिली ॥

मात सेर कै सात पकाइन नौ सेरे कै एकै ।

तू दहिअरऊ सातौ खायेउ मैं कुलवन्तिन एकै ।

करकसा नारि मिली ॥

देहरी बैठे तेल लगावैं सेंदुर चुपरैं माँगि ।

अँचर पसारि कै मुरुज मनावैं कब मैं [होब्यों रौड़ ॥

करकसा नारि मिली

[छोकड़े गाना गाकर नाचने लगते हैं । वे कई तरह का नाच नाचते हैं, और बाजेवाले अपनी सारी कलाएँ दिखाते हैं । इसके बाद नाच समाप्त हो जाता है । भीड़ छुटने लगती है । छोकड़े, करिंगा और बाजे वाले अपना साज उतारने लगते हैं । अजनबी विनार-भग्न होकर बैठा रहता है ।]

अजनबी—[मन में] यह इस देश की पुरानी सभ्यता का चिन्ह अबतक कायम है । समाज की वह व्यवस्था कितनी सुन्दर थी ! उसमें सबसे नीची श्रेणी के आदमियों को समाज की

आलोचना करने का स्वतन्त्र अधिकार दिया गया था । करिगे ने राजनीति, धर्म, समाज, सबकी आलोचना कर डाली । इससे समाज के मिथ्याडम्बरवाले लोग सावधान हो जाते होंगे । इस तरह समाज का मैल धुलता रहता है । अब करिगे का काम अखबारों के सम्पादकों ने ले लिया है, पर उनको इतनी जानकारी नहीं होती ।

[अजनबी उठकर सोचता हुआ जाता है ।]

नवाँ दृश्य

समय—प्रातःकाल ।

स्थान—मन्दिर ।

[एक छोटे से सुन्दर मन्दिर में देवताओं की कुछ मूर्तियाँ हैं । मूर्तियाँ नाना वेप-भूषणों से सजाई हुई हैं । सब पर फूल चढ़े हैं । धूप की सुगन्ध फैल रही है । पुजारी मन्दिर के द्वार पर आसन पर बैठा है । हाथ में माला है । धीरे-धीरे ओंठ हिल रहे हैं । वह जप कर रहा है ।

अजनबी का प्रवेश । अजनबी मन्दिर के भीतर की शोभा देखने के लिये अन्दर आता है । मूर्तियों को प्रणाम करके खड़ा हो जाता है और ध्यान से देखने लगता है ।

एक भारी तोड़वाले और सिर्फ धोती पहने हुए बनिये का प्रवेश । बनिया मन्दिर में प्रवेश करते समय 'बम-बम' बोलता है । फिर देवता के सामने जा खड़ा होता है ।]

बनिया—[आखें मूँदकर और दोनों हाथ जोड़कर बड़े प्रेम से पढ़ता है :—]

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
 त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
 त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
 त्वमेव पैसा मम देव-देव ॥ १ ॥

मूकं करोति वाचालं, पंगुं लंघयते गिरिम् ।
 वन्दनीयोऽपि देवानां पैसा हि परमेश्वरः ॥ २ ॥
 पैसा नाम नरस्य रूपमधिकं,
 प्रच्छन्नं गुप्तं यत्नं ।

पैसा पापहरः यशः सुखकरः
 पैसा गुरूणां गुरुः ।
 पैसा बन्धुजनो विदेश गमने,
 पैसा परं दैवतं ।

पैसा राजमुपूजितं नहि गुणं,
 पैसा हमें दो प्रभो ॥ ३ ॥

गोलाकार नयन-सुखद सेठनाभं महान्तम् ।
 विश्वाधारं विविध वपुषं मिन्ट्योनि शुभांगम् ॥
 पाई-कान्तं अमित-चरितं निगुणं निर्विकारम् ।
 वंदे पैसां कृपण-कुल के देवता ब्रह्मरूपम् ॥ ४ ॥
 नत्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
 कामये केवलं पैसां सर्वानन्द-प्रदायकम् ॥ ५ ॥

कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि के प्रिय दाम ।

भक्तन मन मन्दिर बसहु, वैसेहि पैसा राम ॥६॥

यस्यास्ति पैसा स नरः कुलीनः

स पंडितः स श्रुतिमान्मुण्डः ।

स एव बक्ता स च दर्शनीयः

पैसा हमें केवल चाहिये प्रभो ! ॥ ७ ॥

जय हो भव-भयहारी, बाजार-विहारी, पाप-पंजहारी, पैसा परमेश्वर की जय हो !

[बनिया दण्डवत करके, पुजारी के पास आकर चरणामृत लेकर, उँगलियाँ मुँह में डालकर बकरे की-सी बोली बोलता हुआ मन्दिर से बाहर जाता है । अजनबी चुपचाप यह दृश्य देखता और बनिये की हरएक प्रार्थना पर मुसकुराता है ।]

अजनबी—[मन में] अजब तमाशा है । पैसा परमेश्वर का शत्रु है, बनिया परमेश्वर से भी पैसा माँगता है । [पुजारी से] पुजारी जी ! यह भक्त पैसा, पैसा क्या कहता रहा ?

पुजारी—इसने पैसा-स्तोत्र बनाया है, उसी का पाठ करता है । यह बनिया बड़ा भक्त है ।

अजनबी—इसके पाठ में तो मन की सच्ची बात बाहर आ गई है ।

हाँ, यह तो बताइए, जब वह मन्दिर में आया, तब 'बम'-
'बम' बोला और जाते समय बकरे की बोली बोला, इसका क्या अर्थ है ?

पुजारी—इसकी एक कथा है । शिवजी एक राक्षस से लड़ रहे थे ।

उसने हारकर भागे, तब उनकी भारी तोंद और दोनों पुट्टे दलक रहे थे, और लड़के बम-बम कहते उनको खदेड़े जा रहे

थे । पार्वतीजी पहाड़ पर बैठी थीं, यह दृश्य देखकर बहुत हँसीं । दूसरी घटना यह है कि पार्वतीजी के पिता दत्त प्रजापति का शिवजी के गणों ने सिर काट लिया, तब उनके कटे हुए गले पर बकरे का सिर काटकर जोड़ दिया गया; तब दत्त प्रजापति बकरे की तरह बोलने लगे । यह देखकर शिवजी खुशी के मारे नाच उठे । भक्त मन्दिर में आता है, तब पहले घर की मालकिन को प्रसन्न करता है और जो कुछ माँगना होता है, माँग लेता है । फिर जाते समय शिवजी को भी प्रसन्न कर लेता है । बिगाड़ क्यों करे ?

अजनबी—[हँसकर] बानिया स्त्री-पुरुष दोनों के भीतरी भगड़े का लाभ ले लेता है । यह तो दोनों से चालाक निकला ।

पुजारी—[हँसकर] पैसा सब कुछ सिखा देता है ।

अजनबी—भगवान के दर्शन कब-कब होते हैं ?

पुजारी—भगवान् जब शयन करते हैं, तब पट वन्द हो जाते हैं । पर कोई लक्ष्मीवान आता है, तो लक्ष्मी को भगवान के शयनागार में जाने से कौन रोक सकता है ?

अजनबी—[मन में] पैसे का राज मन्दिर तक भी पहुँच गया है ।

सम्पुच पैसा ही परमेश्वर बन गया है ।

[अजनबी देवताओं को और पुजारों को प्रणाम करके जाता है ।]

दसवीं दृश्य

समय—दस वें अंक का दृश्य ।

स्थान—मंत्री का आवास ।

[न्यायस का बजा कमरा में जा चुके गियो, टेलीफोन, गीटों, बिजली व पखों और मेज पर का कीमती और सुन्दर रुब-रुब की चीजों में सजा हुआ है । उस सामने का दीवार पर उला महात्मा का चित्र लटका रखा है, जिससे अजनबी आनीखें उत्सव में देख चुका है । अजनबी मंत्री की दृष्टि और में पाए बैठा है । मंत्री की वस्त्र और तेर-गौदह वर्ण का एक सुन्दर लड़का जाधिया आग आधा बाह का कुरता पहने बैठा है । मंत्री के दाये-बाये मेज पर फाइलें रखी है ।]

अजनबी—[चित्र को देखकर] यह तो आपके देश के बड़े महात्मा का चित्र है । मैं देख चुका हूँ ।

मंत्री—[चित्र की ओर देखकर और श्रद्धा प्रकट करते हुए हाथ जोड़ कर प्रणाम करते] हाँ, ये ही हमारे आदर्श हैं । इन्हीं के बताये मार्ग पर हम लोग चलते हैं ।

अजनबी—[मन में] जान पड़ता है, भीतर से यह पैसा बोल रहा है; क्योंकि महात्मा के जीवन की कोई भी झलक मंत्री के इस दीमटाम के तहाँ दिखाई पड़ती । [प्रकट] मैं बहुत बातें आपसे जानना चाहता हूँ; आप आधा से तो

मंत्री—हाँ, हाँ खुश होकर प्रसन्न हो !

अजनबी—सरकार को न्याय का बस रखने और जनता की उन्नति के साथ-साथ देश के लिए होती है, अगर वह पैसों का

व्यापार क्यों करती है ?

मन्त्री—अजनबी जी ! आप नहीं जानते, सरकार पैसे से बनी है और पैसे के लिए ही बनी है । पैसे बिना वह चल ही नहीं सकती ।

अजनबी—तब पैसे से जो अनाचार फैला है, उसकी जिम्मेदार भी सरकार होगी ?

मन्त्री—अनाचार तो पैसे का गुण ही है । देश की मालो हालत पर अनाचार का कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता । अगर किसी वंजूस बनिये का पैसा ढाकू उठा ले गये, तो पैसे का सिर्फ स्थान बदला, देश की तो कोई हानि हुई नहीं । बल्कि इस प्रकार से समाज को लाभ ही पहुँचा; क्योंकि ढाकू पैसे को जल्द बाजार में ला देगा और बदले में बहुत-सी चीजें उठा ले जायगा; जिससे बहुत स व्यवसायों का माल आगे सरकेंगा, और सरकार भी मुनाफे में रहेगी ।

अजनबी—तो बनिये को डाकों से भी लाभ पहुँचता है ?

मन्त्री—यह तो निश्चित ही है ।

अजनबी—अच्छा, जनता की रहन-सहन का स्तर उँचा करने की बात क्या है ?

मन्त्री—क्रय-शक्ति बढ़ाकर मूल्य के जो स्तानना का उपयोग करना इसका उद्देश्य है ।

अजनबी—क्रय-शक्ति बढ़ाने का अर्थ है, बनिये का लाभ पहुँचाना ।

मन्त्री—[हँसकर] बनिया तो सरकारी रथ का बैल ही है । उसके पीछे तो गाड़ी चल ही नहीं सकती । उभो के बल पर तो

सरकार एक कोड़ी के कागज का सो रुपया लेती है।

अजनबी—देश में सरकार की सबसे बड़ी शक्ति क्या है ?

मन्त्री—पैसा। पैसा से बढ़कर कोई शक्तिमान वस्तु नहीं। किसी देश में अगर मुझे निकके ढालने और चलाने का अधिकार मिल जाय तो मुझे फौज और पुलिस की ज़रूरत ही नहीं, मैं बिना ग्यून-खच्चर किये देश का बादशाह बन सकता हूँ। वस, एकबार सिक्का जम जाना चाहिये। पैसे में अपरम्पार शक्ति है।

अजनबी—सरकार जो कुछ करती है, पैसे के लिए ?

मन्त्री—आमने विलकुल सही समझा है।

अजनबी—और बनिया पालने के लिए ?

मन्त्री—यह भी सही है। सरकार को पैसे तो बनिये ही से मिलते हैं। बनिया तो सरकार और कूँये के बीच की रस्मी है।

अजनबी—तो ज़मा कीजियेगा, सरकार का जनतंत्र नाम तो गलत है।

मन्त्री—तो फिर क्या होना चाहिए ?

अजनबी—बनिया-बटोर।

मन्त्री—[गृध्र हँसकर] जो कुछ समझिए। बनिया बड़ा चतुर होता है। उससे सरकार की नोक-भोंक चलती रहे तो बड़ा मजा आता है। [गृध्रें मुँदकर मजा लेता है।]

अजनबी—बनिया ब्लैक भी करता है।

मन्त्री—तो क्या हर्ज है। किसान की पूँजी खींच लेता है, जिससे वह मुस्त और निकम्मा नहीं बनने पाता।

अजनबी—कंट्रोल क्या है ?

मन्त्री—कंट्रोल ब्लैक का बाप है ।

अजनबी—आपने तो कानून बनाया है कि मनुष्य-मात्र स्वतंत्र है; फिर कंट्रोल करके उनकी बेंचने की स्वतंत्रता सरकार क्यों अपहरण करती है ?

मन्त्री—कंट्रोल से ब्लैक पैदा होता है । ब्लैक से पूँजी खींची जाती है, इम्ब्रिए ।

अजनबी—पूँजी खिंच जने से जनता क्या ग़रब न हो जायगी ?

मन्त्री—गहरा कुवाँ पानी निकालने रहने से क्या कभी गरीब हो जाता है ? या उसके सब मोते जोरों से गुल्ल जाते हैं ?

अजनबी—तब यह कहना चाहिये कि सरकार बनियों की है और बनियों के लिए ही बनी है ।

मन्त्री—मैं मानता हूँ ।

अजनबी—फिर जनतंत्र नाम तो एक पड़यन्त्र ही है ।

मन्त्री—कहा जा सकता है; पर पढ़े-लिखों का ।

अजनबी—देश में तो मनुष्यों का राज्य होना चाहिये, किसी-वर्ग विशेष का नहीं ।

मन्त्री—पैसे का नशा उतर जायगा, तभी होगा ।

अजनबी—कैसे उतरेगा ?

मन्त्री—लड़ाइयों से । पैसा लड़ाई लगाये बिना रह नहीं सकता ।

उसी में वह अपनी मौत मर जाता है, तब नशा कुछ दिनों के लिए उतर जाता है ।

अजनबी—लड़ाई से भी बनियों को लाभ तो पहुँचा ही होगा ?

मन्त्री—सबसे अधिक । कोई बनिया लड़ाई में नहीं जाता । वह घर बैठे लड़ाई लगाता है और पैसे को अपनी ओर खींच लेता है ।

अजनबी—सरकार भी मुनाफे में रहती हैं ?

मन्त्री—लड़ाई खतम होने के बाद ।

अजनबी—अपने दौरे में मैंने देखा, आपके प्रांत के एक हिस्से में बड़ा अकाल पड़ा हुआ है, लोग भूखों मर रहे हैं ।

मन्त्री—हाँ, मुझे पता है, कुछ लोग भूख से मर गये हैं ।

[सेक्रेटरी का प्रवेश । कोट पतलून की पोशाक में आकर वह सामने खड़ा हो जाता है ।]

सेक्रेटरी—राजसभा में प्रश्न आने वाला है कि प्रांत के पूर्वी हिस्से में कितने आदमी भूख से मरे । क्या जवाब दिया जाय ?

मन्त्री—जवाब दे दाँ, कोई नहीं । पता लगा लिया गया है; जो मर रहे हैं, वे स्वाभाविक मौत से मर रहे हैं, भूखा रहकर कोई नहीं मरा ।

[सेक्रेटरी जाता है ।]

लड़का—ताता ! तुम तो बहुत झूठ बोलते हो । अभी तो तुम कह रहे थे, बहुत से आदमी मर गये ।

मन्त्री—[अजनबी से] यह मेरा नानी है, बड़ा नटखट है । [लड़के से] नाना झूठ नहीं बोलता, बेटा !—मन्त्री बोलता है ।

लड़का—तुमने बोलते तुमको क्या कहेंगे ?

[अजनबी लड़के की ओर देखकर मुसकुराता है ।]

मन्त्री—कुछ भाँ कहें । मन्त्री तो राष्ट्र का नौकर है । जिसमें राष्ट्र का

हित देखेगा, वही करेगा । न झूठ मेरा, न सच मेरा । सच और झूठ दोनों राष्ट्र की संपत्ति हैं । जहाँ जिसकी जरूरत पड़ेगी, मंत्री उसे वहीं इस्तेमाल कर लेगा । [ल . के की ठुड्की पकड़कर] अभी जरा और बड़े हो लो, तो समझोगे कि राष्ट्र क्या है, और मंत्री क्या है ?

अजनबी—[मन में] क्या महात्माजी ने यही राह इन लोगों को बताई है ? [प्रकट] मंत्री को कभी-कभी झूठ क्यों बोलना पड़ता है ?

मंत्री—राष्ट्र के हित के लिए । भूख से न मरने देने का प्रबन्ध तो किया ही जा रहा है, जां मर गये, सो मर गये, उनको लेकर जावितों में हलचल पैदा करना कोई बुद्धिमानी की बात तो नहीं ?

लड़का—नाना ! बुखार से लोग महीनों भूखे रहकर मर जाते हैं, उनकी मौत स्वाभाविक है, या अस्वाभाविक ?

[अजनबी उत्तर सुनने के लिए उसुक दिखाई पड़ता है ।]

मंत्री—स्वाभाविक । इसी तरह आहार की कमी से मरना भी स्वाभाविक ही है ।

[सेक्रेटरी का प्रवेश]

सेक्रेटरी—कुछ श्री-गुरुओं के नाम आये हैं । जिनको कहा जाता है कि आहार की कमी से मर गए । क्या उद्धार दिया जाय ?

मंत्री—कह दो, जाँच करा ली गई है । वे आहार की कमी से नहीं, भुकवुकी वजह से मरे हैं ।

[सेक्रेटरी जाता है ।]

लड़का—नाना ! क्या कोई आदमी धुकधुकी बन्द न होने से भी मरता है ?

मन्त्री—(लड़के का कान पकड़कर) तुम बड़े नटखट हो ।

(अजनबी खूब रस ले रहा है ।)

अजनबी—पैसा भयंकर चीज है ।

मन्त्री—मगर उसका नशा मजेदार है, चाहे थोड़े ही दिनों के लिए हो । आप नहीं जानते, पैसे ने परमेश्वर का राज्य छीन लिया और एक नई दुनिया बना दी, और उसका नाम सरकार रख कर परमेश्वर के सारे गुण उसमें भर दिये । परमेश्वर का न रूप है, न रंग, सरकार भी ऐसा ही है; परमेश्वर के पैर नहीं; पर कहा जाता है कि वह चलाता है; सरकार के भी पैर नहीं, पर वह चलती है; परमेश्वर के हाथ नहीं, पर वह करता है; सरकार के भी हाथ नहीं, पर वह करती है; परमेश्वर बिना आँख के देखता है; सरकार भी वैसे ही देखती है; परमेश्वर के कान नहीं, पर वह सुनता है; सरकार के भी कान नहीं, पर वह सुनती है; परमेश्वर के हजारों सिर हैं, सरकार के भी हैं । सरकार किस बात में परमेश्वर से घटकर है ? परमेश्वर के भक्त तिलकों से पहचाने जाते हैं; सरकार के भक्त पोशाकों से पहचाने जाते हैं; परमेश्वर सर्वत्र व्यापक माना जाता है; सरकार की सर्वव्यापकता जग जाहिर है; परमेश्वर की सृष्टि में जब दुःखों का धूर जमा हो जाता है, तब लाखों बरस बाद वह अवतार लेता है, और उसे साफ़ करता है, दुःखियों की पुकार वह

कई जन्मों के बाद सुनता है। सरकार फौरन सुनती है और फौरन् अपना प्रतिनिधि मौके पर भेज देती है। इस तरह सरकार ने परमेश्वर के हाथ का सारा काम छीन लिया है। पैसे के सामने तो परमेश्वर की अक्की-वक्की भूल गई है। आप उसे क्या समझते हैं ?

[मंत्री ठठाकर हँसता है]

अजनबी—मौत तो अभी परमेश्वर ही के हाथ में है।

मन्त्री—पर हरएक की जिंदगी तो पैसे के हाथ में आ गई है। परमेश्वर तो नाप-नापकर जिंदगी देता है और हरएक को जिंदगी भर के लिए कोई न कोई काम भी सौंपता है; पर पैसा तो आदमी का पैदा होते ही गोद में उठा लेता है और अपना एक गुलाम बना लेता है। परमेश्वर उसका मुँह ताकता ही रह जाता है। परमेश्वर बुढ़ों को मारकर नया आदमी पैदा करता है, इससे पैसे की क्या हानि है ? उसे तो एक नया आदमी मिल जाता है, जो पैसे का काम ज्यादा तेजी से करता है। [आखें मटकाकर] सुना अजनबीजी ?

अजनबी—इस देश में तो बड़े-बड़े त्यागी, तपस्वी, महात्मा और संत उत्पन्न हुए, जिन्होंने मनुष्य को धर्म का रास्ता दिखाया, उसे आप लोगों ने क्यों छोड़ दिया ?

मन्त्री—पैसे की सरकार में धर्म और परमेश्वर दोनों नहीं हैं। उनके बारे में कोई कुछ कहे, हम सुन ही नहीं सकते। सरकार जो कानून बनाती है, वही हमारा धर्म है और पैसा हमारा परमेश्वर है, जिसकी सरकार है।

अजनबी—सरकार को मैंने नहीं देखा ।

मन्त्री—आप देख भी नहीं सकते । मैंने भी नहीं देखा ।

अजनबी—क्या सरकार का कोई शरीर नहीं ?

मन्त्री—जिस तरह जहाँ बहुत-से स्त्री-पुरुष बुलाकर जमा कर लिए जाते हैं, और उसका नाम सभा हो जाता है । सभा का न कोई शरीर होता है, न रूप-रंग । उसी तरह कामों की मशीन बनाकर और योग्यता के अनुसार आपस में काम बाँटकर जिसे बहुत से नौकर मिलकर चलाने लगते हैं, वही सरकार है ।

अजनबी—अर्थात् काम करते हुये नौकरों का समूह ही सरकार कहलाता है । तो यह नौकरों का समूह भी किसानों ही पर खड़ा होता होगा ?

मन्त्री—उस पर न खड़ा हो, तो किसानों में सुख और शान्ति कैसे रहे । [कुछ रुककर, विषय बदलने के लिये] अच्छा, आपने तो मेरा सारा देश देख लिया, मुझे आपकी हर रोज की खबर मिलती रहती थी । आप अभी कितने दिन और यहाँ रहेंगे ?

अजनबी—जल्दी ही जाऊँगा । माँ रोज याद कर रही है । (उठकर) आपने मिलने का समय दिया, और बहुत-सी बातों का खुलासा किया । इस कृपा के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद ।

[मन्त्री हाथ बढ़ाता है । अजनबी हाथ मिलाकर बाहर जाता है ।]

ग्यारहवाँ दृश्य

समय—शाम ।

स्थान—क्लब-घर के सामने का लॉन ।

[लॉन पर एक बड़ा-सा शामियाना तना है । क्लब के प्रायः सभी सदस्य, स्त्री-पुरुष दोनों, और कुछ प्रतिष्ठित नागरिक भी, जो निमन्त्रण भेजकर बुलाए गये हैं, उपस्थित हैं और कई पंक्तियों में कुर्सियों पर बैठे हैं । फर्श पर दरी बिछी है । एक तरफ एक मेज और उससे लगकर दो कुर्सियाँ रखी हैं । मेज पर जरूरी सजावट की गई है । एक कुर्सी पर अजनबी और दूसरी कुर्सी पर सभापति बैठे हैं ।]

सभापति—[उठकर] क्लब के माननीयम दस्यो ! और निमन्त्रित सज्जनो ! आपका यह जानकारी बड़ी प्रसन्नता होगी कि श्रीअजनबीजी आज आपके प्रश्नों का उत्तर देने आये हैं ।

[तालियों की जोरदार ध्वनि]

अजनबीजी अपनी राय देकर तुरन्त चले जाना चाहते हैं । मैंने उनके देश की सीमा तक, या जहाँ तक मोटरकार जा सके वहाँ तक, उनको पहुँचा देने की व्यवस्था क्लब की ओर से कर दी है । यह पूछने पर कि इस देश की कोई चीज यादगार के तौर पर आप अपने साथ ले जाना चाहते हैं ? उन्होंने केवल दियासलाई पसन्द की, जिसका एक बड़ा बक्स उनके साथ रखवा दिया गया है ।

[हँसी और तालियों की ध्वनि]

अब आप अजनबीजी की राय ध्यानपूर्वक सुनिये । [अज-

नवी से] अजनबीजी ! मैं क्लव के समस्त सदस्यों की तरफ से आप से प्रार्थना करता हूँ कि आप हमारी वर्तमान सभ्यता के बारे में अपनी स्पष्ट राय सबको सुना दें। क्लव की ओर से मैं आपको धन्यवाद पहले ही दिये देता हूँ; क्योंकि आप राय देकर तुरंत ही चले जाना चाहते हैं।

[सभापति बैठ जाता है।]

अजनबी—[तालियों की ध्वनि के साथ खड़े होकर] सज्जनो ! आज मैं आपके प्रश्न का उत्तर देने के लिये आया हूँ। मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि आपके विस्तृत देश में, गाँवों और शहरों में घूम कर, धनी-गरीब, किसान और पेशेवर, मिल-मालिक और मजदूर, शिक्षित और अशिक्षित, विचारक और कलाकार, चोर और डाकू, भक्त और महंत, जनता और मन्त्री, पुलिस और जज आदि प्रायः सभी श्रेणियों के लोगों से मिलकर मैंने स्वयं लाभ उठाया है और अपनी एक राय भी मैं कायम कर सका हूँ। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि क्लव के सभी सदस्यों ने सर्वत्र मेरा सम्मान किया है और स्पष्ट शब्दों में उन्होंने मेरे प्रश्नों के उत्तर दिए हैं। अतएव मैं सभापति महोदय और अन्य सभी सदस्यों का हृदय से कृतज्ञ हूँ और उनके प्रेम-पूर्ण व्यवहार को मैं अपने जीवन की एक अमूल्य सम्पत्ति समझकर उसकी मधुर स्मृति अपने साथ ले जाऊँगा। अब आप अपना उत्तर लीजिये—[तालियों की ध्वनि]

यह मैं पहले ही निवेदन कर देना चाहता हूँ कि मैं अपनी

सच्चि राय, जो मेरी समझ में आई है, दूँगा । मैं किसी सज्जन का दिल दुखाना नहीं चाहता; पर मुझे झूठ बोलना नहीं आता; क्योंकि असभ्य जंगली हूँ । इससे क्षमा माँगता हूँ ।

मैं आपको एक कहानी सुनाता हूँ । मेरा खयाल है, उसी में आपके प्रश्न का उत्तर आपको मिल जायगा, कहानी यह है :—

एक बार खुदा अपनी बनाई दुनिया देखने निकले । उन्होंने जानवरों को जंगल में कलोलें करते देखा; चिड़ियों को पेड़ों पर चहकते और फुदकते देखा; नदी-नालों को बहते और पहाड़ों को चुपचाप खड़े देखा; पर आदमी उन्हें कहीं नहीं दिखाई पड़ा । खोजते-खोजते वह एक जंगल में झुण्ड का झुण्ड लड़ते-झगड़ते, गाली-गलौज करते और स्त्रियों की छीना-झपटी करते हुए मिला । खुदा उसकी यह हालत देखकर दुःखी हो गये और खड़े होकर उसे देखने लगे ।

खुदा की लम्बी और सफेद दाढ़ी और मूँछें, और ठिगना कड़ देखकर आदमी हँसने लगा । उसने पूछा—तुम कौन हो ?

खुदा ने कहा—मैं खुदा हूँ ।

आदमी ने अपने साथियों को पुकारकर खुदा की खिल्ली उड़ाते हुए कहा—आओ, जरा खुदा को तो देख लो, कैसी लम्बी दाढ़ी है !

खुदा को गुस्मा आया। उन्होंने पैर पटका। तुरन्त ही पृथ्वी काँपने लगी, सूरज कुम्हार के चाक की तरह फिरने लगा, ज़ोर का तूफ़ान चलने लगा, पहाड़ भुनगों की तरह हवा में उड़ने लगे और नदियाँ उछल-उछलकर सिर पटकने लगीं। अब तो आदमी डरा। उसने घुटने टेक दिये: जमीन पर माथा रगड़ा और कहा—माफ़ कीजिए, आप खुदा हैं; मैं मान गया; आपजो हुक्म देंगे, हम वही करेंगे। खुदा ने फिर पैर पटका और दुनिया फिर ज्यों की त्यों हो गई। आदमी हाथ जोड़कर उठ खड़ा हुआ।

खुदा ने कहा—देखो, मैंने तुमको सब जानदारों से इसलिए ज्यादा अहम दी है कि तुम अपने अंदर से मुझे पहचान सको; पर तुम तो जानवर से भी बुरी हालत में हो। आगे मेरे गुस्से से बचना चाहते हो, तो मेरी दस बातें सुनो और उनके अनुसार चलो।

आदमी ने कहा—हज़ूर ! जल्द बताइए; मैं एक कदम को भी इधर-उधर बिचलने न दूँगा।

खुदा ने कहा—भूठ मत बोलना, चोरी मत करना, चुशली मत खाना, व्यभिचार मत करना, लालच मत करना, क्रोध मत करना, घमंड मत करना, झूठी गवाही मत देना, हमेशा मुझे याद करते रहना और दसवीं बात यह कि शैतान की बात मत मानना।

आदमी ने सिर झुकाकर कहा—बहुत अच्छा, खुदाबन्द !

खुदा आगे चले गये। आदमी सोचने लगा कि खुदा ने सब

मत करो, मत करो तो कड़ा, पर क्या करें यह तो कुछ बताया ही नहीं। करके देख तो लें, उनमें खराबी क्या है ? इतने में खुदा के पीछे लगा हुआ शैतान आ पहुँचा। आदमी ने उसे देखते ही कहा—भाग, भाग, अभी खुदा कह गये हैं कि शैतान की बात मत मानना। मैं तेरी बात नहीं सुनेँगा।

शैतान ने हँसकर कहा—तुम खुदा की सारी बातें मानो, मैं उनके खिलाफ कुछ न कहूँगा। मेरी तो एक ही बात है, और वह तुम्हारे बड़े काम की है।

आदमी सोच-विचार में पड़ गया—एक ही बात तो है, सुन लेने में क्या हर्ज है ? मैं खुदा का हुक्म क्या टाल सकता हूँ ?

उसने कहा—अच्छा, कह, क्या कहता है ?

शैतान ने कहा—जो पाप छिपाकर करोगे, वह पाप नहीं समझा जायगा। वस, मेरी तो यही एक बात है।

यह कहकर शैतान भी खुदा के पीछे-पीछे चला गया।

आदमी को खुदा की दसों बातें भूल गईं और शैतान की एक ही बात उसे याद रह गई और अबतक याद है।

मित्रो ! यह शैतान कौन है ? वह पैसा है। और आपकी सभ्यता पैसे की सभ्यता है; मनुष्य की सभ्यता नहीं। “जो पाप छिपाकर करोगे, वह पाप नहीं समझा जायगा,” आपकी वर्तमान सभ्यता में मुझे तो सर्वत्र यही हाता हुआ देखने को मिला है। नमस्कार।

[अजनबी भुक्कर अपना डण्डा, जो मेज के नीचे पड़ा था, उठा लेता है और चला जाता है। सभापति उसके पीछे जाता है। सदस्य पत्थर की मूर्ति की तरह चुपचाप बैठे रहते हैं। कुछ मिनटों में सभापति वापस आता है।]

सभापति—[मेज के पास खड़े होकर] मित्रो ! अजनबीजी ने बड़े मर्म की बात कही है; उस पर हमें विचार करना चाहिए। अब आज का समारोह समाप्त किया जाता है।

[सब उठ-उठकर पंक्ति-बद्ध होकर चुपचाप बाहर जाते हैं।]

— — —

